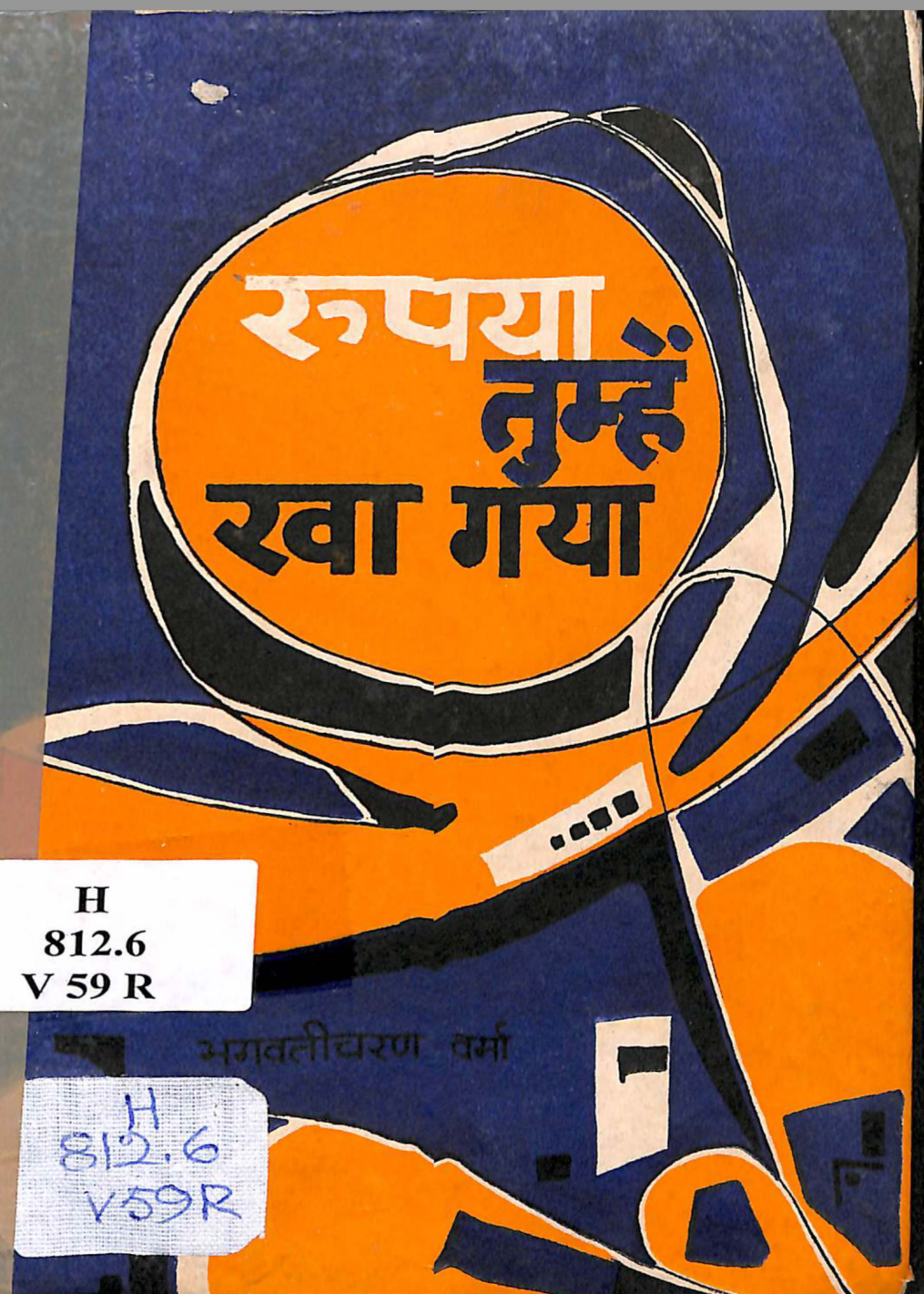

रुपया तुम्हें खा गया

भगवतीचरण वर्मा

H
812.6
V 59 R

H
812.6
V59R

रुपया तुम्हें खा गया

भगवतीचरण वर्मा

राजकमल प्रकाशन

दिल्ली-६ पटना-६

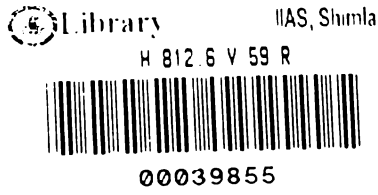
Library IIAS, Shimla
H 812.6 V 59 R
00039855

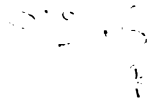

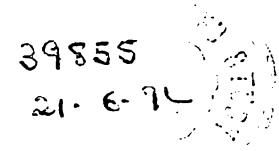

© भगवतीचरण वर्मा

द्वितीय आवृत्ति | १९७०

मूल्य | ३.००

प्रकाशक | राजकमल प्रकाशन प्रा० लि०, दिल्ली-६

मुद्रक | नवीन प्रेस, दिल्ली-६

भूमिका

भारतीय साहित्य में नाटकों का सदा से एक विशिष्ट स्थान रहा है और इसका कारण स्पष्ट है। अभिनय मानव की आदि मनोवैज्ञानिक प्रवृत्ति है। हमारे लोक-जीवन में तीन प्रवृत्तियाँ हमें स्पष्ट रूप से दिखती हैं, नृत्य, संगीत और अभिनय। इन तीन प्रवृत्तियों में प्रमुख कौन है यह कहना कठिन है, विशुद्ध नृत्य और संगीत को तो कला में स्थान मिला है, लेकिन विशुद्ध अभिनय कभी भी कला में सम्मिलित नहीं किया गया। नाटक में अभिनय प्रधान है, फिर भी विद्वानों ने नाटक की उत्पत्ति नृत्य और संगीत से मानी है, अभिनय से नहीं। इस मत को प्रतिपादित करने वाले विद्वान अधिकांश में पाश्चात्य हैं और उन्होंने यूनान तथा रूम के नाटकों की चर्चा करते हुए यह कहा है। हमारे प्राचीन शास्त्रकारों ने भी इस सम्बन्ध में मौन रहना ही उचित समझा है यद्यपि उन्हों-ने नाट्य-शास्त्र पर विस्तार के साथ लिखा है।

अभिनय मानव की आदि-प्रवृत्ति है, इसे समझने के लिए हमें अपने जीवन को ही देखना पड़ेगा। छोटे-छोटे बच्चों में दूसरों का अभिनय करके मनोरंजन प्राप्त करने की एक प्राकृतिक-प्रवृत्ति है। हँसी-मजाक में दूसरों की नकल करना अभिनय तो है ही।

अभिनय की इस स्वाभाविक प्रवृत्ति में दूसरों की नकल करके मनोरंजन प्राप्त करने की भावना भर है। यह नकल प्रायः जीवित लोगों की ही की जाती है और इस अभिनय में प्रायः उन जीवित

लोगों की हँसी उड़ाई जाती है। सम्भवतः इसीलिए विशुद्ध अभिनय कला का अंग नहीं बन सका क्योंकि जहाँ नृत्य और संगीत अन्तर्मुखी हैं, उनका सम्बन्ध दूसरों से असम्बद्ध विशुद्ध अपनी भावना से है, वहाँ अभिनय बहिर्मुखी है, वह दूसरों से सम्बन्धित है।

अभिनय ने कहानी के साथ मिल कर ही कला का रूप धारण किया। नृत्य और संगीत को अभिनय के सहयोग से प्रभावशाली बनाने की प्रवृत्ति आदि-काल में दिखाई देती है, दक्षिण भारत में भरत-नाट्य इसका स्पष्ट उदाहरण है। सम्भवतः इसीलिए कुछ विद्वानों ने नाटक की उत्पत्ति नृत्य से मानी है। पर यहाँ वे इस मनोवैज्ञानिक सत्य की उपेक्षा कर जाते हैं कि अभिनय केवल चरित्रों का एवं चरित्रों की भाव-भंगिमा का होता है, और ये चरित्र कहानी के अंग हैं, नृत्य तथा संगीत के अंग नहीं हैं।

अभिनय का आदि रूप हमें स्वांगों में दिखता है। स्वांगों में मूक अभिनय होता है, और ये स्वांग आज भी हम अपने यहाँ देखते हैं। पर इन स्वांगों में भी कहानी का ही आधार है। कहानी के किसी एक अंग को आधार बना कर स्वांग बनाए जाते हैं, और ये स्वांग अधिकांश में मूक-अभिनय के प्रतीक ही होते थे। स्वांगों का विकसित रूप है लीला या तमाशा। इन लीलाओं अथवा तमाशों में प्रधानता कर्मों को मिलती है--जहाँ स्वांगों में केवल रूप भर कर किसी विशेष चरित्र का चित्रण किया जाता था वहाँ तमाशों अथवा लीलाओं में विभिन्न चरित्रों के कर्मों द्वारा एक कहानी भी कही जाती है। पर ये स्वांग तथा तमाशे प्रायः मूक होते हैं, अभिनय की यह अवस्था नाटक से पहले की है, वहाँ साहित्य नहीं है। उसमें केवल कला का आदि-रूप है, वह पूर्ण विकसित कला नहीं है।

मानव की एक और आदि-प्रवृत्ति है जो नृत्य-संगीत और अभिनय से बिलकुल अलग है और वह प्रवृत्ति है कहानी की। कहानी पूर्णतः कल्पना की चीज है—वह कल्पना शब्दों में बँधी हुई है। संगीत, नृत्य, अभिनय में कल्पना का वह स्थान नहीं है जो कहानी में है। बौद्धिक मानव में यह कल्पना नितान्त स्वाभाविक है—वह व्यक्ति के बौद्धिक विकास की चीज नहीं है, वह मानव के बौद्धिक विकास की चीज है।

कहानी और अभिनय ये दोनों बौद्धिक हैं, नृत्य और संगीत भावनात्मक हैं। बच्चों में कहानी के प्रति आकर्षण उतना ही स्वाभाविक है जितनी उसमें अभिनय की प्रवृत्ति है। दोनों में ही बुद्धि और कल्पना का सम्मिश्रण है। आज भी छोटे-छोटे बच्चों का सब से बड़ा मनोरंजन कहानी में ही माना जाता है। कहानी की आदि-प्रवृत्ति भी विकसित हुई, बुद्धि और कल्पना की सीमा को तोड़ कर उसने भावना को ग्रहण किया और इस प्रकार कहानी ने साहित्य का रूप धारण किया।

भावना की ये प्रवृत्तियाँ—अभिनय और कहानी—एक दूसरे के पूरक अंग हैं। इन्हीं दोनों के संयोग से नाटक का जन्म होता है। पर इन दोनों में जो साहित्यिक है वह कहानी है और इसीलिए नाटक का जन्म तब तक नहीं हुआ जब तक कहानी विकसित नहीं हुई। कहानी के विकास के बाद ही नाटक का जन्म सम्भव था।

२

संस्कृत के आदि-साहित्य के रूप में हमारे सामने दो ग्रंथ हैं—रामायण और महाभारत। रामायण काव्य है, महाभारत को हम काव्य की परिभाषा देते हुए भी एक बहुत बड़ा आख्यान ही कह सकते हैं।

इस स्थान पर हमें कविता की व्याख्या भी कर लेनी पड़ेगी। मानव में समवाय (harmony) के प्रति एक अजीब तरह का मोह है; कहना यह भी अनुचित न होगा कि समस्त मानव-जीवन की कल्पना ही समवाय (harmony) के सिद्धान्तों पर है। इस समवाय का प्रतीक है लय। और लय को आधार बना कर तीन कलाओं का जन्म हुआ है—नृत्य, संगीत और कविता। ताल, स्वर और भावना—इन तीनों का योग कविता में होता है। लोक-गीतों में और लोक-नृत्यों में जब शब्द का सहारा लिया गया तभी कविता का जन्म हुआ। हमारे लोक-गीतों के कुछ पद कविता से ओत-प्रोत होते हैं—यद्यपि उन पदों को साहित्य में स्थान नहीं मिला क्योंकि उन पदों में उस शिल्प का अभाव है अथवा शिथिलता है जो कृति को कलाकृति बनाती है। कविता में साहित्य का शिल्प प्रधान है जो उसे लोक-गीत से ऊपर उठाती है और इसीलिए कविता ही साहित्य की प्रथम रचना कहलाई।

जैसा मैं कह चुका हूँ लय से तीन कलाओं का जन्म हुआ, नृत्य, संगीत और कविता। विशुद्ध गति जो शरीर के अंगों से संचालित होती है नृत्य के रूप में आई। पर इस नृत्य में विशुद्ध लय के साथ अभिनय के संयोग से ही कला का जन्म हुआ। लय के समवाय ने नृत्य को कला का रूप दिया, लेकिन उस कला को अभिनय के अवलम्ब से ही प्रभावशाली एवं आकर्षक बनाया जा सका।

संगीत लय के साथ स्वर प्रसार के सहयोग से उत्पन्न हुआ। संगीत स्वर की कला है और स्वरों के समवाय से भावना को जागृत करना संगीत का उद्देश्य है। वैसे संगीत के कुछ आचार्यों ने स्वरों के समवाय (harmony) को ही प्रधानता दी है, लय के समवाय को वे दूसरी कोटि पर मानते हैं, पर जब हम संगीत के

आदि-रूप को देखते हैं तब इन आचार्यों का मत भ्रामक सिद्ध हो जाता है। लोक-संगीत में स्वरों का समवाय उतना ही महत्त्वपूर्ण है जितना लय का समवाय। बाद में जब संगीत का विकास हुआ, लयकारी को प्रमुखता मिली; ध्रुवपद जिसे ध्रुपद कहते हैं--लय पर ही चलता है। स्वर प्रसार का संगीत जो ख्याल के नाम से चला, बहुत बाद में, प्रायः अठारहवीं शताब्दि में ही विकसित हो सका।

कविता का जन्म लय और शब्द के सहयोग से हुआ। मानव चेतन और बौद्धिक प्राणी है, मानव-जीवन में शब्द की सब से अधिक महत्ता है। मानव की समस्त भावना शब्द में केन्द्रित है और इसीलिए समस्त कलाओं में प्रमुखता साहित्य को ही प्राप्त हो सकी। कविता साहित्य का प्रथम रूप है। हमारे प्राचीन साहित्य में प्रधानता कविता को ही मिली है।

कहानी शब्दों पर ही आधारित है। चेतन और बौद्धिक मानव में कहानी के प्रति रुचि अत्यन्त स्वाभाविक है, और कहानी का प्रमुख उद्देश्य है मनोरंजन। इस कहानी में जब विशुद्ध मनोरंजन के साथ-साथ उपयोगिता और उद्देश्यों का समावेश हुआ तब इस कहानी ने साहित्य-कला का रूप धारण किया। भूत प्रेतों की कहानियाँ, परियों की कहानियाँ—इन सब कहानियों में जब तक उद्देश्यहीनता रही—यानी विशुद्ध मनोरंजन के अलावा और किसी भावना का समावेश जब तक उनमें नहीं रहा, तब तक यह कहानी साहित्य-कला का अंग नहीं बन सकी, वह साहित्य-कला का अंग तभी बनी जब वह बौद्धिक और चेतनप्राणी में भावना के उदात्तीकरण में सहायक हुई।

जैसा मैंने पहले कहा, संस्कृत-साहित्य के जो आदि-ग्रन्थ हमारे सामने हैं उनमें कहानी का आधार है। रामायण और महाभारत दोनों ही कहानियों को लेकर आगे बढ़े हैं। बाद के साहित्य को भी

जब हम देखते हैं तब हमें यह स्पष्ट हो जाता है कि वही काव्य जीवित रह सका है जिसमें कहानी का आधार रहा है ।

और इसीलिए मेरा कुछ ऐसा मत है कि नाटक का विकास कविता और आख्यान के बाद ही हुआ है । अभिनय और कहानी के सम्मिश्रण से नाटक का जो आदि-रूप विकसित हुआ वह बहुत समय तक लोक-कला का ही भाग रहा, साहित्य में वह काफी बाद में आया । संगीत और कहानी की एकरूपता साहित्य में पहले स्थापित हुई ।

३

संस्कृति-साहित्य के विकास का जब हम अध्ययन करते हैं तब हमें यह स्पष्ट रूप से दिखता है कि संस्कृत-साहित्य का प्रमुख भाग नाटक-साहित्य है । संस्कृत का प्रथम नाटककार भास माना जाता है जो ईसा से पूर्व तीसरी या चौथी शताब्दि का माना जाता है । भास के बाद अश्वघोष, कालिदास, शूद्रक, हर्षदेव, भवभूति आदि जितने प्रमुख साहित्यकारों की कृतियाँ हमारे सामने आती हैं उनमें नाटकों को ही प्रधानता है । भास से लेकर जयदेव तक का काल नाटकों का काल है ।

प्राचीन काल के नाटकों में हमें कहानी, कविता, नृत्य और अभिनय—इन सब का सामंजस्य मिलता है और सम्भवतः इसीलिए नाटकों को संस्कृत साहित्य में इतना अधिक महत्व दिया गया । ग्रीक-साहित्य में भी नाटकों के इसी रूप का उल्लेख है ।

नाटक को अपने यहाँ दृश्य-काव्य कहा गया है, वह विशुद्ध श्रव्य काव्य अथवा पठित साहित्य की अपेक्षा अधिक प्रभावशाली है ।

विदेशों में भी नाटक के इसी गुण के कारण नाटक-साहित्य को बहुत अधिक सफलता प्राप्त हुई । अंग्रेजी के अमर कलाकार

शेक्सपियर के नाटक आज भी अंग्रेजी साहित्य के सर्वोकृष्ट ग्रन्थ माने जाते हैं।

नाटक की सफलता का प्रधान कारण है उसका यांत्रिक होना। बौद्धिक प्राणी होने के कारण मानव में यन्त्र के प्रति एक स्वाभाविक रुचि है। नाटक साहित्य का यांत्रिक रूप है और इसीलिए वह साहित्य का सबसे शक्तिशाली एवं प्रभावशाली माध्यम माना गया। यांत्रिक होने के कारण नाटक की उसकी निजी सीमाएँ भी हैं; इन सीमाओं के होते हुए वह साहित्य का एकमात्र रूप न बन सका है और न बन सकेगा, पर यन्त्र पर आस्था रखने वाला मानव नाटक की सीमाओं को अधिक-से-अधिक कम करने का प्रयत्न कर रहा है।

नाटक का यान्त्रिक-रूप है नाटक का रंगमंच। हमारे देश में जो नाटकों की इतनी प्राचीन परम्परा है तो उसका एक रंगमंच भी रहा होगा। वह रंगमंच कैसा था, उसका क्या रूप था? इस सम्बंध में इतिहास में बहुत कम सामग्री उपलब्ध है। लोक-नाटक खुले हुए रंगमंचों पर ही होते थे—ग्रीस के इतिहास में इसका स्पष्ट उल्लेख है। भारतवर्ष में भी खुले हुए रंगमंच ही होते थे, लेकिन राजप्रासादों में बन्द रंगमंचों की व्यवस्था थी। रंगमंच पर परदे होते थे—और वाद्य-संगीत के संचालन का भी वहाँ प्रबन्ध था।

भारतवर्ष में नाटकों का विकास अधिकांश में राज्याश्रय पर ही हुआ है, और सम्भवतः इसीलिए भारतवर्ष में अराजकता का काल हमारे देश में सांस्कृतिक ह्रास का काल माना जाता है। आठवीं या नौवीं शताब्दि के बाद हमारे देश में एक भयानक सामाजिक पतन और ह्रास की लहर आई और उसके फलस्वरूप देश को ग्यारहवीं शताब्दि में विदेशी गुलामी के बन्धनों में बँधना पड़ा।

वह काल देश के सांस्कृतिक ह्रास का काल है। इस सांस्कृतिक ह्रास का प्रभाव हमारे देश के साहित्य पर बहुत अधिक पड़ा, कला और साहित्य को जो राज्याश्रय मिलता था वह समाप्त हो गया।

हमारे यहाँ साहित्य के हमेशा से दो रूप माने गए हैं—एक का सृजन ऋषि-मुनियों ने किया, जिसका सृजन करने वाले साहित्यकार विश्व के वैभव की उपेक्षा करते रहे; दूसरा वह साहित्य जो भोग-विलास की परम्परा को लेकर आगे बढ़ा। नाटक-साहित्य इसी दूसरे प्रकार के पार्थिव साहित्य का प्रतीक था। नौवीं और दसवीं शताब्दि के बाद एक प्रकार से इस पार्थिव साहित्य का विकास प्रायः बन्द हो गया। वह जो ऋषि-मुनियों का या त्यागियों का साहित्य था, वह उसी गति से चलता रहा पर उस प्रकार के साहित्य का अनुपात अनादि काल से बहुत कम होता रहा है।

दसवीं शताब्दि के बाद तो हमारे देश में नाटक की परम्परा में विकास लुप्त हो गया। विदेशियों की गुलामी के काल में नाटकों की परम्परा स्वयं ह्रासोन्मुखी हो गयी, विकास की तो बात उठाना ही व्यर्थ है। यह ह्रास का काल हमें अङ्गरेजी शासन के प्रारम्भ तक दिखता है। अङ्गरेजों के आने के बाद फिर से नाटकों के प्रति साहित्यकारों एवं कलाकारों का ध्यान आकर्षित हुआ, लेकिन उस समय तक हम अपने प्राचीन रंगमंच की परम्परा को इस क़दर भूल चुके थे कि जिस नाटक का उस समय जन्म हुआ वह परम्पराहीन, अकलात्मक और प्रभावहीन था।

भारतेन्दु हरिश्चन्द्र ने प्रथम बार हिन्दी रंगमंच को जीवनदान करने का प्रयत्न किया। उन्होंने संस्कृत की नाटक परम्परा का अध्ययन किया था, उसी के आधार पर उन्होंने भारतीय रंगमंच

की कल्पना भी की। पर उस समय तक समय बहुत आगे बढ़ गया था। पश्चिम में यन्त्रों के विकास के साथ नाटक इतना अधिक विकसित हो चुका था कि प्राचीन भारतीय रंगमंच को पुनः उसी रूप में स्थापित करने का प्रयत्न प्रभावहीन ही प्रमाणित हुआ।

अङ्गरेजी सभ्यता के सम्पर्क में आकर हमारी प्राचीन मान्यताओं में परिवर्तन स्वाभाविक ही था और इसीलिए नाटक की एक नवीन परम्परा स्थापित करने की आवश्यकता पड़ी। इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए पारसी-रंगमंच का उदय हुआ। कुछ समय तक पारसी-रंगभंच सफलता के साथ चला, यद्यपि उस रंगमंच की स्थापना से एक रंगमंच तो हमारे यहाँ आया पर नाटक-साहित्य की अभिवृद्धि नहीं हुई।

पाश्चात्य कला और साहित्य का प्रभाव सब से अधिक बंगाल पर पड़ा और बंगाल के रंगमंच ने इस दिशा में यथेष्ठ उन्नति की। पर यह कहना कठिन है कि बंगाल के रंगमंच ने अभी तक नाटक-साहित्य में कोई विशेष अभिवृद्धि की। द्विजेन्द्रलाल राय के नाटकों में साहित्यिक झलक अच्छी दिखती है पर उन नाटकों को साहित्य की विशिष्ट कृतियाँ कहना कठिन होगा।

हिन्दी में श्री जयशंकर प्रसाद ने अधिकांश में नाटक ही लिखे। पर श्री जयशंकर प्रसाद के सामने कोई विकसित रंगमंच न था और इसलिये ये नाटक पढ़ने के साहित्य में उच्च-स्थान पाते हुए भी दृश्य काव्य की कोटि में नहीं आ सके। इन नाटकों का यदा-कदा सफल अभिनय भी हुआ। किन्तु आज की बदली हुई मान्यताओं के सामने उन्हें रंगमंच में कोई स्थान नहीं मिल सका।

हमारे देश में वर्तमानकाल में नाटक के विकास में सबसे बड़ी बाधा उपस्थित हुई चलचित्रों के कारण।

जैसा मैं पहले कह चुका हूँ, नाटक साहित्य का यांत्रिक-रूप है और यान्त्रिक विकास के साथ नाटक के रूप में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन होते गये हैं। नाटक की अपनी निजी सीमाएं हैं और उन सीमाओं को यन्त्र की सहायता से दूर करने में मानव सतत प्रयत्नशील रहा है। चलचित्रों ने नाटक की बहुत-सी सीमाओं को तोड़ दिया है। रंगमंच पर बड़े-बड़े नगर, सागर, आकाश, नदी, वन, पर्वत आदि नहीं दिखाए जा सकते थे, चलचित्रों में इन सब को दिखाया जा सका। इन चलचित्रों के विकास के कारण युरोप के उस रंगमंच को भी बहुत गहरा धक्का लगा जहाँ का रंगमंच यन्त्रों की अधिक-से-अधिक सहायता से विकसित हो चुका था; हमारे देश के रंगमंच का कहना ही क्या, जहाँ नवीन एवं आधुनिक रंगमंच का विकास ही नहीं हुआ था। चलचित्रों के आविष्कार से हमारे देश में रंगमंच के विकास की ओर जो जनमत जागृत हो रहा था उसमें गतिरोध पैदा हो गया। जिनके पास पैसा था और जिनकी नाटकों के प्रति रुचि थी वे सब-के सब नाटक के उस नवीन माध्यम की ओर मुड़ गये। कलकत्ता, बम्बई आदि में जो नाटक-घर बने थे वे सब-के-सब सिनेमा घरों में परिवर्तित हो गए और नाटकका विकास एक बार ही नष्ट हो गया। पारसी-रंगमंच की जो कम्पनियाँ चल रही थीं वे सब-की-सब टूट गयीं और इस प्रकार हिन्दी-रंगमंच के क्षेत्र में एक भयानक शून्य उत्पन्न हो गया। विदेशों में यान्त्रिक सहयोग के सहारे भावना और स्पन्दन सहित रंगमंच जीवित रहा। विशुद्ध यान्त्रिक चलचित्र उस जीवित और सप्राण रंगमंच को मार नहीं सका। पर हमारे यहाँ के नवजात रंगमंच को जिसे यन्त्रों का पर्याप्त बल नहीं प्राप्त हो सका था, जिसे साहित्य द्वारा जनित प्राण की पुष्टता नहीं मिल सकी थी, इस विशुद्ध यान्त्रिक चलचित्र ने

समाप्त कर दिया ।

आज जो भी रंगमंच हमारे यहाँ है उसे हम शौकिया या एमेच्योर रंगमंच (Amateur Stage) ही कह सकते हैं । इस शौकिया रगमंच की क्षमता के बाहर की बात है कि वह बड़े नाटकों को प्रदर्शित कर सके । सम्भवतः इसीलिए हिन्दी के सप्राण लेखकों ने सम्पूर्ण नाटक लिखने की ओर ध्यान नहीं दिया क्योंकि अभिनीत होने के लिए इनकी मांग नहीं थी । सम्पूर्ण नाटक लिखने में परिश्रम करना पड़ता है—और उस परिश्रम का उचित पुरस्कार जब तक लेखक को न मिले तब तक लेखक उस ओर ध्यान न देगा । हाँ, हिन्दी के सप्राण लेखकों ने एकांकी नाटक अवश्य लिखे क्योंकि शौकिया रंगमंच को एकांकी नाटकों की मांग थी ।

आज जो सम्पूर्ण नाटक लिखे जा रहे हैं वे अधिकांश में रंगमंच पर अभिनीत होने के लिए नहीं लिखे जाते, वे केवल पढ़ने के लिए लिखे जाते हैं । पर हमें यह ध्यान में रखना ही पड़ेगा कि नाटक दृश्यकाव्य है, वही नाटक अधिक-से-अधिक सफलता प्राप्त कर सकता है जिसका अभिनय हो । प्रायः लोगों ने यह शिकायत की है कि हिन्दी में रंगमंच पर अभिनीत हो सकें ऐसे नाटकों का अभाव है, और उनकी यह शिकायत ठीक ही है । पर उन लोगों की भी जिन पर ऐसे नाटक न लिखने का दोष आरोपित किया जाता है, एक बहुत बड़ी शिकायत हो सकती है कि हिन्दी में कोई ऐसा रंगमंच ही नहीं है जिसमें अभिनीत होने के लिए नाटकों की मांग हो ।

हिन्दी साहित्य में उच्चकोटि के एकांकी नाटक यथेष्ट संख्या में लिखे गए हैं जिनका शिल्प आधुनिक मान्यताओं के अनुसार पूर्ण-रूप से विकसित है । पर हिन्दी में आधुनिक रंगमंच पर खेले जाने वाले सम्पूर्ण नाटकों का नितान्त अभाव है । इस अभाव की पूर्ति तभी

सम्भव है जब हिन्दी में आधुनिक रंगमंची स्थापना हो। आधुनिक रंगमंच क्या है यहाँ हमें इस बात को भी समझ लेना पड़ेगा।

नाटक दृश्यकाव्य है, और इसलिए नाटक में दृश्यों को ही प्रधानता दी जा सकती है। चलचित्रों का मुकाबिला करने के लिए नाटकों में रंगमंच की सजावट नितान्त असम्भव है। यान्त्रिक विकास के साथ पश्चिम का रंगमंच बहुत अधिक विकसित हो चुका है। कृत्रिम उपायों से बहुत कुछ रंगमंच पर दिखलाया जा सकता है; विभिन्न प्रकार के प्रकाशों से भावना को सजीव बनाने में सहायता मिल सकती है, उस पर पाश्चात्य रंगमंचों पर विशेष ध्यान रक्खा गया है; दृश्य का समस्त वातावरण रंगमंच पर उपस्थित किया जा सकता है।

यही नहीं, रंगमंच के सम्वाद दर्शकों को स्पष्ट-रूप से सुन पड़ें इसकी भी पूरी व्यवस्था आधुनिक रंगमंच पर की गयी है। रंगमंच के प्रत्येक कोने पर माइक्रोफोन लगे रहते हैं जिससे एक आह, एक निःश्वास तक दर्शकों को सुनाई पड़ सकता है।

यह आधुनिक रंगमंच अभी तक हिन्दी में स्थापित नहीं हो सका और इसका कारण हमारे देश में चेतना का अभाव ही है।

५

देश के व्यापारी वर्ग में रचना और निर्माण की भावना नहीं होती है, वह तो मुनाफे के लिए ही काम करता है। वैसे व्यापारी-वर्ग कला के माध्यमों में व्यापार की सोच ही नहीं सकता, उसमें कल्पना का अभाव है। इसी कारण सिनेमा-व्यवसाय में देश के प्रमुख औद्योगिकों ने कभी योग नहीं दिया, शौकिया भले ही किसी उद्योग-पति ने अपना रुपया लगा दिया हो।

हमारे यहाँ रंगमंच की जो स्थापना नहीं हो सकी उसका

एकमात्र कारण यह है कि आरम्भ में कला-प्रेमियों के पास जो पूँजी थी वह फिल्म-व्यवसाय में लग गयी। फिल्म-व्यवसाय आधुनिकतम व्यवसाय था, पूर्ण रूप से यांत्रिक और इसलिए उसकी सफलता लोगों को निश्चित-सी लगी। प्रारम्भ में फिल्मों से लोगों को लाभ हुआ, लेकिन बाद में कुप्रबन्ध, कल्पना के अभाव, गलत मान्यताओं के कारण फिल्म व्यवसाय को बहुत बड़ा धक्का लगा और आज यह फिल्म-व्यवसाय मृतप्राय-सा पड़ा है।

इस बीच में रंगमंच उपेक्षित पड़ा रहा। रंगमंच को स्थापित करने के लिए यहाँ कोई प्रयत्न ही नहीं किया गया, यहाँ तक कि वे नाटक कम्पनियाँ जो प्राचीन परम्परा पर नाटक करती थीं, वे भी लोप होती गयीं। नाटक दिखलाने के लिए जो भवन बने थे उनका उपयोग सिनेमा दिखलाने के लिए होने लगा।

आज रंगमंच की स्थापना के लिए हमारे समाज में कुछ जागृति दिखलाई देती है; और आज की समाजवादी व्यवस्था में समाज का प्रतिनिधित्व शासन के हाथ में है। विभिन्न प्रादेशिक या केन्द्रीय सरकारें रंगमंच की स्थापना की आवश्यकताएँ अनुभव करने लगी हैं, पर अभी तक रंगमंच की स्थापना के लिए कोई प्रभावशाली कदम नहीं उठाया जा सका है। ऐसी आशा की जाती है कि निकट-भविष्य में सरकारों द्वारा रंगमंच की स्थापना हो सकेगी।

पर हमें यह समझ लेना चाहिये कि सरकारों द्वारा जो कुछ भी होगा उसका दृष्टिकोण सांस्कृतिक हो सकता है, व्यापारिक नहीं। और इसीलिए रंग-मंच के विकास में सरकारी प्रयत्नों की प्रतीक्षा करने से रंगमंच के विकास में काफी विलम्ब लग सकता है। यह तो व्यापारी लोगों का ही कर्तव्य हो जाता है कि वे इस ओर ध्यान दें।

मेरा ऐसा मत है कि प्रत्येक पाँच लाख से ऊपर आबादी वाले नगर में एक स्थायी रंगमंच की स्थापना हो सकती है, और वह रंगमंच लाभ के साथ चलेगा। यदि किसी नगर में ... या पन्द्रह सिनेमा हाउस चलते हैं तो वहाँ एक नाटक-घर भी चल सकता है। उसका कारण यह है कि यदि एक दर्शक सात फिल्म देखता है तो एक नाटक भी देखना चाहेगा। पर यह नाटक सफल तभी हो सकता है जब उसका रंगमंच आधुनिक हो।

हिन्दी में घूमने वाला मंच (Revolving stage) है ही नहीं। इस युग में जब रंचमंच की सजावट पर ही नाटक की सफलता अवलम्बित है, बिना घूमने वाले मंच के यह सजावट सम्भव नहीं। एक दृश्य सामने हो रहा है, पीछे दूसरा दृश्य सजाया जा रहा है। यह दृश्य समाप्त हुआ, मंच घुमा दिया गया और तत्काल पीछे वाला दृश्य जो सज चुका है सामने आ गया। दूसरा दृश्य जब तक होता रहा तब तक पहले दृश्य की सजावट बदल कर तीसरे दृश्य की व्यवस्था कर दी गयी।

मेरा ऐसा अनुमान है कि यह स्थिति बहुत दिनों तक नहीं रह सकती। वैसे कलाकारों और साहित्यकारों के संगठन स्थान-स्थान पर बन रहे हैं या बन चुके हैं जो रंगमंच की स्थापना पर गम्भीरतापूर्वक प्रयत्नशील हैं, पर आज के यांत्रिक युग में एक यांत्रिक रंगमंच स्थापित करने के लिए भावना अकेले सहायक नहीं होगी। उसके लिए यथेष्ट धन-राशि की आवश्यकता पड़ेगी। मेरा ऐसा अनुमान है कि सांस्कृतिक-स्तर से ऊपर उठकर यदि कलाकार सहकार-समितियाँ बनाकर सरकार से आर्थिक सहायता प्राप्त कर सकें तो यह सम्भव हो सकेगा। जहाँ दो-चार रंगमंच सफल हुए वहीं व्यापारी-वर्ग इस ओर टूट पड़ेगा।

शौकिया ढंग से (Amateur lines) जो रंगमंच के विकास की योजनाएँ वन रही हैं, उनसे रंगमंच की स्थापना में [illegible]ा ही उत्पन्न होगी क्योंकि इन योजनाओं से हम रंगमंच का रूप आ[illegible] बनाने के स्थान पर भद्दा और कुरूप वना देते हैं और दर्शकों के मन में उत्साह के स्थान पर वितृष्णा ही पैदा होती है ।

६

आधुनिक यान्त्रिक रंगमंच के विकास के साथ आज विश्व में नाटकों का रूप भी वदल गया है, और नाटक का जो वर्तमान रूप विकसित हुआ है वह हमारे प्राचीन नाटकों से सर्वथा भिन्न है ।

हमारे प्राचीन नाटकों में यान्त्रिक उपकरणों के अभाव की पूर्ति अन्य आकर्षणों से की जाती थी; इन अन्य आकर्षणों में संगीत और नृत्य का प्रमुख स्थान है । जैसा मैं पहले निवेदन कर चुका हूँ, नाटक कहानी और अभिनय के योग का नाम है, संगीत, नृत्य, नाटक के भाग नहीं हैं, वे स्वयं में प्रभावोत्पादक कलाएँ भले ही हों । पर दृश्यकाव्य में दृश्य के उपकरणों के विकसित न होने के कारण नाटकों में संगीत तथा नृत्य के साधनों से नाटक को सफल बनाने की प्रवृत्ति थी । संगीत और नृत्य प्रायः कहानी के रसात्मक प्रसार में बाधक हो सकते हैं पर उनकी उपयोगिता के कारण उन्हें सम्मिलित ही करना पड़ता था और इसलिए नाटक की कहानी प्रायः उतनी गठी हुई तथा उतनी प्रभावशाली नहीं होती थी । नाटक से नृत्य-संगीत को अलग करने के प्रयत्नों को जो सफलता पाश्चात्य देशों को मिली वह रंगमंच में यान्त्रिक विकासों द्वारा कहानी तथा अभिनय को शक्ति प्रदान करने की क्षमता के कारण ।

और इसीलिए वर्तमान पाश्चात्य नाटकों में नृत्य एवं संगीत को कोई स्थान नहीं ।

आज जब हमारा देश विश्व के समुन्नत देशों के समकक्ष आ चुका है और विश्व की विभिन्न संस्कृतियों में यथेष्ट आदान-प्रदान हो चुका है तब हमारे देश का नाटक साहित्य किस प्रकार यान्त्रिक-विकास के प्रभाव से मुक्त रह सकता है ? यही नहीं, आज का साहित्य समस्या-मूलक साहित्य है। आज की समस्याओं में संघर्ष है, एक प्रकार का तीखापन है। हमारे देश के प्राचीन नाटकों में कवित्व की प्रधानता है—आज का नाटक समस्या और संघर्ष का नाटक है। आज का नाटक काल्पनिक रंगीनी से हट कर वास्तविकता को आधार बना रहा है।

हिन्दी के एकांकी नाटकों में ये समस्याएँ और यह संघर्ष मुखरित है, पर सम्पूर्ण नाटकों में रंगमंच की सीमा के कारण यह संघर्ष नहीं आ पाया है।

हिन्दी के भावी नाटक का रूप वह नहीं रहेगा जो आज है, उसका रूप बदलेगा।

७

"रुपया तुम्हें खा गया" एक समस्या-मूलक नाटक है जो आधुनिक रंगमंच को ध्यान में रख कर लिखा गया है। इस नाटक के पात्र जीवन से लिये गए हैं, वे पात्र सजीव-प्राणी हैं। यह नाटक कहानी और अभिनय के योग पर ही चलता है, संगीत तथा नृत्य का इसमें कहीं कोई स्थान नहीं। इस नाटक में कल्पना की रंगीनी नहीं है—यह मानव के आन्तरिक संघर्ष की कहानी है। यह कहानी युग का प्रतिनिधित्व करती है।

आज की भौतिक और पूँजीवादी संस्कृति जिन मान्यताओं पर स्थापित है वह मान्यताएँ मिथ्या हैं—इस नाटक में यही दिखाने का प्रयत्न किया गया है।

आज का हर एक व्यक्ति रुपए को महत्व देता है । रुपए की शक्ति सुख-सुविधा को खरीद सकती है—ऐसा लोगों का ख्याल है । और एक बार जब रुपए की शक्ति को स्वीकार कर लिया गया तब मानव उस रुपए का दास बन जाता है । आज के समाज में अधिकांश लोग इस रुपए की शक्ति के उपासक हैं, और यही गलत मान्यता समाज के कल्याणकारी विकास में बाधक है ।

पर वास्तविकता कुछ और है । मानव के अस्तित्व का आधार है उसके अन्दर वाली ममता, दया और करुणा की प्रवृत्ति ! उसका बलिदान और त्याग ही समाज को बल प्रदान करता है । रुपया तो सुख-सुविधाओं को एकत्रित करने का माध्यम भर है—जो सत्य है वह मानव की भावना है ।

मानिकचन्द उस मानव का प्रतीक है जो रुपए को देवता मानकर उसकी उपासना करता है । उसकी नज़र में रुपए से बड़ी कोई शक्ति नहीं है; वह रुपए की यह शक्ति प्राप्त करने के लिए सब कुछ कर सकता है । वैसे उसके जीवन में उसकी पत्नी है, उसके बच्चे हैं, उनकी ममता है, स्नेह है । पर वह रुपए की शक्ति को स्वीकार करता है—और दस हजार रुपया चुरा लेता है ।

जिस दिन वह दस हजार रुपया चुराता है—वह समझता है वह रुपया खा गया । हिन्दी में "रुपया खाना" वाक्य का प्रयोग रुपए की बेईमानी, चोरी आदि के लिए ही होता है । जब हम कहते हैं कि अमुक व्यक्ति रुपया खा गया तब हमारा मतलब यही होता है कि उसने उस रुपए को अनुचित ढंग से हस्तगत किया है । इसी प्रयोग के अनुसार मानिकचन्द समझता है कि वह दस हजार रुपया खा गया ।

मानिकचन्द उन्नति करता जाता है और करोड़पति बन जाता

है। उसके पास रुपए की शक्ति है, वह रुपए की शक्ति को उद्घोषित करता है। लेकिन क्या करोड़पति बन कर उसने जीवन के सुखको पा लिया ? क्या उसकी भौतिक मान्यता सही थी ?

इस नाटक की कहानी इसी प्रश्न को लेकर आगे चलती है और अन्त में यह दिखता है कि मानिकचन्द से बढ़ कर दुखी और अभागा आदमी दुनिया में मुश्किल से ही मिलेगा। उसके जीवन में कहीं भी ममता, सहानुभूति, प्रेम आदि भावनाएँ नहीं हैं। कोई भी ऐसा नहीं है जिसे वह अपना कह सके, हरेक व्यक्ति मानिकचन्द के रुपए का दास है, उसके रुपए को ही महत्ता देता है— व्यक्ति मानिकचन्द का कोई कहीं नहीं है।

मानिकचन्द का पुत्र, उसकी पत्नी, उसकी लड़की, उसके नौकर-चाकर, कोई भी तो उसका नहीं है। हरेक व्यक्ति की नजर उसके रुपयों पर है, हरेक व्यक्ति उसके रुपयों को ही पाना चाहता है।

और इसी प्रकार मानिकचन्द यह अनुभव करता है कि वह व्यक्ति की हैसियत से मर गया है। वह रुपया जिसे उसने एक दिन समझा था कि वह खा गया, उसे ही खा गया था। वह दस हजार रुपए चुराने के पहले वाला मानिकचन्द गरीब भले ही रहा हो, पर भावना का प्राणी था, दूसरे उसके थे, वह दूसरों का था। और बीमारी में पड़ा हुआ बीस वर्ष बाद वाला मानिकचंद एक नितान्त अकेला और दयनीय प्राणी है—यह मानिकचन्द स्वयं अनुभव करता है।

इस नाटक की कहानी केवल इतनी है, लेकिन यह कहानी कहते हुए मैंने उस वर्ग की मनोवैज्ञानिक स्थिति पर तथा उसकी मान्यताओं पर भी उतना प्रकाश डाला है जितना मैं डाल सकता था।

डाक्टर और किशोरीलाल—ये दो चरित्र उन मान्यताओं के प्रतीक हैं जो सत्य हैं, जो शाश्वत हैं। कर्तव्य, प्रेम, भावना—इन

पर विश्वास करने वाला किशोरीलाल और उस किशोरीलाल का पुत्र डाक्टर जयलाल इस रुपए की मान्यता के खोखलेपन को प्रदर्शित करते हैं।

भगवतीचरण वर्मा

रु प या
तुम्हें खा गया

पात्र-परिचय

मानिकचन्द	एक करोड़पति
रानी	मानिकचन्द की पत्नी
मदन	मानिकचन्द का पुत्र
शोभा	मानिकचन्द की पुत्री
जयलाल	डाक्टर
किशोरीलाल	जयलाल का पिता
मुनीम	मानिकचन्द का मुनीम
गम्भीरमल	एक व्यौपारी
कस्तूरचन्द	मानिकचन्द का समधी

वकील
व्यौपारी
नर्स आदि

प्रथम अंक

पहला दृश्य

[परदा उठता है। सेठ मानिकचन्द का शयनागार दिखाई देता है। सामने की दीवार में दो खिड़कियाँ हैं जिन पर रेशमी परदे पड़े हैं। परदे हटे हुए हैं और खिड़कियाँ बन्द हैं। खिड़कियों के शीशे से बाहर का बाग दिखता है। बाहर एक तूफ़ान सा उठ रहा है। भयानक वर्षा हो रही है और रह-रह कर बिजली चमक रही है। दोनों खिड़कियों के बीच में एक लोहे का सेफ है। सेफ के ऊपर दीवार पर विष्णु भगवान का एक चित्र लटक रहा है। सेफ के ऊपर लक्ष्मी की मूर्त्ति रक्खी है। खिड़कियों के ऊपर भी देवी-देवताओं के चित्र लटक रहे हैं।

दाहिने हाथ एक दरवाज़ा है जिस पर रेशमी परदा पड़ा है। दरवाज़ा मंच के इस ओर है, दूसरी ओर एक लम्बी खिड़की है। खिड़की और दरवाज़े के बीच ड्रेसिंग टेबिल रक्खी है।

बाएं दीवार से मिला एक सोफ़ा सेट पड़ा है। बाईं ओर पीछे की ओर एक दरवाज़ा है, जिस पर परदा पड़ा है। बाईं ओर वाली दीवार से मिली हुई आगे की ओर एक पुस्तकों की अलमारी है।

कमरे के बीचोबीच एक पलंग पड़ा है, जिसका सिरहाना पीछे वाली दीवार की ओर है और पैताना दर्शकों की ओर है। पलंग के पास दो साधारण कुर्सियाँ पड़ी हुई हैं। सिरहाने दाईं ओर एक छोटी-सी मेज़ है जिस पर टेलीफोन रक्खा हुआ है। सिरहाने बाईं ओर एक दूसरी मेज़ है जिस पर दवाओं की शीशियाँ रक्खी हुई हैं।

पलंग पर मानिकचन्द आँखें बन्द किए हुए लेटा है। मानिकचन्द की अवस्था लगभग पचास वर्ष है। वह धोती और कुर्ता पहने है। मूँछ

छोटी-छोटी और खिचड़ी, बाल आधे से अधिक पक गए हैं। दोहरे बदन का और मझोले कद का आदमी है।

कमरे के अंदर तूफ़ान का शोर भरा हुआ है, रह-रह कर बादल की गरज सुनाई पड़ती है। बादल एक बार बहुत ज़ोर से गरजता है, मानिकचन्द सहसा चौंक कर आँखें खोलता है और बाईं ओर वाले दरवाज़े की ओर देखता है।]

मानिकचन्द : कौन ? रानी ! रानी !

[नर्स कुर्सी से उठ कर मानिकचन्द के पास आती है।]

नर्स : कहिए श्रीमान्।

मानिकचन्द : तुम कौन हो ? तुम कौन हो ?

[मानिकचन्द खोया हुआ-सा कुछ देर तक नर्स को देखता है।]

बोलती क्यों नहीं ? तुम कौन हो ?

नर्स : नर्स--श्रीमान्।

मानिकचन्द : नर्स ! ओह, तुम नर्स हो। याद आ गया। तो मैं बीमार हूँ। है न ऐसा। [एक रूखी मुस्कराहट उसके मुख पर आती है] अच्छा एक गिलास पानी।

[नर्स मानिकचन्द के सिरहाने रक्खी हुई मेज़ तक जाती है। शीशे के जग में से शीशे के गिलास में पानी डाल कर मानिकचन्द की ओर बढ़ती है। इस बीच टेलीफोन की घंटी बजती है। मानिकचन्द उठकर तकिया के सहारे बैठता है और रिसीवर उठाता है।]

मानिकचन्द : हलो। क्या कहा ? सोना एक सौ चार खुला।

वीस हज़ार तोला बेच दो। ठीक···ठीक।···हाँ, वीस हज़ार ले लो।

[मानिकचन्द रिसीवर रख कर फिर रिसीवर उठाता है और डायल करता है, नर्स पानी का गिलास मानिकचन्द की ओर बढ़ाती है।]

नर्स : पानी श्रीमान्।

मानिकचन्द : ठहरो। हलो, शिवकुमार जी ! टाटा···हाँ अच्छा। तो चार सौ शेयर्स ले लो। इंडियन आयरन··· ओह इतना गिर गया ? नहीं, अभी मत बेचो··· पाँच सौ शेयर्स और ले लो। मार्जिन···कितना देना होगा ? पाँच लाख···अच्छी बात है, मंगा लेना।

[मानिकचन्द रिसीवर रख देता है। तकिया के नीचे से एक कापी निकालता है और उस पर पेंसिल से कुछ लिखता है। लिखते हुए स्वतः कहता जाता है।]

मानिकचन्द : अब नहीं गिरेगा···इतना अधिक गिर चुका है। तीन लाख चालीस हज़ार।···हूं। और सोना : मुख पर मुस्कराहट आ जाती है : एक लाख सैंतीस हज़ार···सात दिन में एक लाख सैंतीस हज़ार का फायदा।

[मानिकचन्द कापी-बुक तकिया के नीचे रख देता है।]

नर्स : पानी श्रीमान्।

मानिकचन्द : नहीं, प्यास नहीं है। जाओ अपनी जगह बैठो जाकर।

[नर्स जाकर अपनी कुरसी पर बैठ जाती है और किताब पढ़ने लगती है, मानिकचन्द लेट कर आँखें बन्द कर लेता है। थोड़ी देर बाद फिर बादल गरजता है और मानिकचन्द चौंक कर आँखें खोल कर देखता है।]

मानिकचन्द : कौन ? मदन····मदन ।

[नर्स फिर उठ कर मानिकचन्द के पास जाती है।]

नर्स : कहिए श्रीमान् !

मानिकचन्द : तुम । तुम फिर । हाँ, मैं बीमार हूँ । डाक्टरों ने उठने और चलने को मना कर दिया है मुझे । मुझे आराम चाहिए, आराम । [मुस्कराता है] नर्स !

नर्स : श्रीमान् !

मानिकचन्द : सुबह से बरस रहा है, और लगातार बरसता जाता है। कितना बजा है ?

नर्स : चार बज कर दस मिनट ।

मानिकचन्द : चार बज कर दस मिनट । तो रानी आज भी नहीं आई। उफ्, कितनी भयानक वर्षा हो रही है। समय से पहले मानसून आ गया ।

[बाहर मोटर का हॉर्न सुनाई पड़ता है।]

यह मोटर का हार्न ? कौन हो सकता है ? मदन ? उसे भी तो अपनी बीमारी की खबर दे दी थी। लेकिन उसने अपने आने की तो कोई सूचना दी ही नहीं। फिर कौन हो सकता है ?

[दाहिनी ओर वाला दरवाज़ा खुलता है। डाक्टर जय-

लाल का प्रवेश। डाक्टर जयलाल की अवस्था लगभग पैंतीस वर्ष की है, वन्द गले का कोट और पतलून पहने हैं। इकहरे वदन का लम्वा-सा आदमी है, मुख पर एक प्रकार की गम्भीरता मिश्रित कठोरता। हाथ में दवाओं का छोटा-सा वक्स है। नपे हुए कदमों से वह कमरे में प्रवेश करता है।]

जयलाल : नमस्कार सेठ जी !

मानिकचन्द : आप हैं डाक्टर साहेव····नमस्कार ! मैं यही सोच रहा था कि कौन हो सकता है····आश्चर्य यह है कि मुझे आपका नाम ही नहीं सूझा।

जयलाल : इसलिए कि मैं आपके जीवन से वहुत दूर हूँ। नर्स !

[नर्स एक कागज़ लेकर डाक्टर जयलाल के पास आती है।]

नर्स : यह टेम्प्रेचर चार्ट है डाक्टर !

[डाक्टर टेम्प्रेचर चार्ट लेकर ध्यान से उसे देखता है।]

मानिकचन्द : आप मेरे जीवन से वहुत दूर हैं····शायद यही हो; लेकिन इस समय तो आप मेरे जीवन के वहुत नज़दीक हैं। और इसीलिए मुझे आश्चर्य हो रहा है कि आपका नाम मुझे क्यों नहीं सूझा। इस भयानक वर्षा में कौन हो सकता है····प्रश्न स्वाभाविक था। [मुस्कराता है] इस भयानक वर्षा में भी आप चले आए।

जयलाल : जी हाँ, जहाँ कर्तव्य का प्रश्न है, वहाँ क्या वर्षा और

क्या तूफ़ान ?

[डाक्टर पलंग के वगल में पड़ी कुर्सी पर वैठता है, नर्स वगल में खड़ी रहती है]

लेकिन वास्तव में इस वर्षा ने प्रलय का रूप धारण कर लिया है। न जाने कितने पेड़ गिर पड़े हैं। कहीं-कहीं सड़क पर घुटनों पानी भरा है। लोगों का एक तरह से आना-जाना वन्द हो गया है। और कोई होता तो घर से निकलने पर सोचता।

मानिकचन्द : और कोई होता तो घर से निकलने पर सोचता। वड़ी कृपा की मेरे ऊपर आपने डाक्टर साहेव।

[टेलीफोन की घंटी वजती है। मानिकचन्द रिसीवर उठाता है।]

मानिकचन्द : हलो····कौन····गम्भीरमल जी····जै गोपाल जी की। कहिये····क्या सेवा है। अजी मुझे अपना ही समझिए। हाँ····हाँ····हाँ, पचास रुपया फ़ी गाँठ से तो कम नहीं हो सकता, नहीं गम्भीरमल जी, वैसे सब-कुछ आपका, लेकिन व्यापार के मामले में····नहीं एक पैसा नहीं कम हो सकता। पाँच हज़ार गाँठें चाहते हो ? हो जायगा। लेकिन ढाई लाख पेशगी दे दीजिये तव सौदा तै होगा। दाम जैसे गांठ उठाते जाँय तैसे देते जाँय, लेकिन ढाई लाख रुपया अभी नकद चाहिए। हाँ····हाँ चले आइये, अभी सव कुछ ठीक हुआ जाता है। घर

पर ही हूँ। [मानिकचन्द रिसीवर रख देता है]
सुना डाक्टर। यह गम्भीरमल भी मेरे ऊपर दया करके इस भयानक वर्षा और तूफ़ान में मेरे यहाँ चला आ रहा है। [हँसता है] पाँच हज़ार गांठें खरीद रहा है, फ़ी गाँठ कम-से-कम सौ रुपया ब्लैक करेगा। ढाई····तीन लाख रुपया पैदा करने के लिए आ रहा है।

[बिजली कड़कती है और उसकी कड़क से कुछ देर के लिए आँखें बंद कर लेता है, फिर आँखें खोल कर कहता है।]

सुन रहे हो डाक्टर, कितने ज़ोर की बिजली कड़की। तो इस प्रलय की परवाह न करके मेरे ऊपर दया करने के लिए चला आ रहा है।

[मानिकचन्द के अन्तिम वाक्य में कुछ थकावट-सी मालूम होती है, और वह लेट जाता है]

डाक्टर : जी हाँ। लेकिन मैं समझता हूँ कि आप·····

मानिकचन्द : आराम करूँ। टेलीफोन पर बातचीत करके अपना कारबार न करूँ। लोग रुपया देने आवें तो मैं उनसे रुपया न लूँ। [हँसता है] अच्छा डाक्टर, सच-सच बताना। जो तुम इस तूफ़ान और वर्षा में मेरे यहाँ इस समय आए हो, क्या अपनी फ़ीस के लिए नहीं आए हो ?

मानिकचन्द अपनी तेज़ नज़र से डाक्टर जयलाल की

ओर देखता है और डाक्टर की आँखें मानिकचन्द की आँखों के आगे ठहरती नहीं, वह झँप जाती हैं। एक तरह की झेंप और हिचकिचाहट डाक्टर के स्वर में आ जाती है]

जयलाल : जी, शायद आप ठीक कहते हैं।

मानिकचन्द : शायद नहीं, सोलह आने ठीक कहता हूँ। कोई किसी पर दया नहीं करता डाक्टर। दूसरों पर दया करना····यह प्रकृति का विधान ही नहीं है। हम जो कुछ करते हैं वह सब अपने लिए करते हैं, समझे डाक्टर––अपने लिए करते हैं।

[मानिकचन्द आँखें बन्द कर लेता है। डाक्टर खड़ा हो जाता है····उसी समय बिजली कड़कती है। मानिकचन्द चौंक कर अपनी आँखें खोलता है।]

मानिकचन्द : कौन ?

जयलाल : कोई तो नहीं।

मानिकचन्द : कोई नहीं। [एक ठंडी साँस लेकर] कोई नहीं। मुझे कितने दिन हुए बीमार पड़े डाक्टर साहेब ?

जयलाल : करीब दस दिन।

मानिकचन्द : दस दिन ! दस दिन से इस कमरे में मैं अकेला बन्द हूँ, अकेला। दो नर्सें इस कमरे में रहती हैं, एक दिन में और एक रात में। डाक्टर क्या तुम समझते हो कि इन नर्सों की मुझे आवश्यकता है ?

डाक्टर : आप क्या समझते हैं ?

मानिकचन्द : मैं क्या समझता हूँ ? कुछ नहीं डाक्टर। इतना सोचा, इतना विचारा, लेकिन समझ में आज तक कुछ नहीं आया। और फिर धीरे-धीरे ऊब कर सोचना-विचारना भी बन्द कर दिया। लेकिन इन दस दिनों के अन्दर·····

[कहते-कहते रुक जाता है।]

जयलाल : जी हाँ, इन दस दिनों के अन्दर ?

मानिकचन्द : समझ में नहीं आता किस तरह अपनी बात कहूँ। इन दस दिनों के अन्दर कुछ अजीब-सा अनुभव हुआ मुझे। [नर्स की ओर देखता है और अपनी बात कहते-कहते रुक जाता है। फिर धीमे स्वर में] मैं समझता हूँ डाक्टर, कि अगर यह नर्स कुछ देर के लिए कमरे से बाहर चली जाय तो कुछ नुकसान न होगा।

जयलाल : बिल्कुल नहीं, मैं तो आपके पास हूँ ही। नर्स !

नर्स : डाक्टर !

जयलाल : थोड़ा-सा पानी गरम करने को रख दो जा कर। इस बीच किसी को इस कमरे में न आने देना।

नर्स : अच्छा डाक्टर।

मानिकचन्द : और जब तक डाक्टर साहेब तुम्हें न बुलावें तब तक तुम भी मत आना।

नर्स : बहुत अच्छा श्रीमान्।

[नर्स कमरे के बाहर जाती है।]

जयलाल : हाँ, अब आप अपनी बात कहिये ।

मानिकचन्द : डाक्टर इन नर्सों की उपस्थिति अब मुझे भयानक रूप से असह्य हो गई है ।

जयलाल : क्यों ? क्या ये लोग ठीक तौर से काम नहीं करतीं ?

मानिकचन्द : काम । [रूखी हँसी हँसता है] शायद इनके बराबर कुशलतापूर्वक काम करने वाला मुझे दूसरा न मिलेगा । हर काम ठीक समय पर, ठीक तरीके से । यन्त्र की तरह अटूट क्रम से यह लगातार काम करती रहती हैं ।

जयलाल : फिर आपको इनसे क्या शिकायत है ?

मानिकचन्द : शिकायत ? मैं शिकायत नहीं कर रहा, मैं तो अपनी बात कह रहा हूँ । डाक्टर ! तुम जानते हो····यन्त्र में प्राण नहीं होते ।

[टेलीफोन की घंटी बजती है । मानिकचन्द रिसीवर उठाता है ।]

मानिकचन्द : हलो····मदन ! अरे कहाँ से बोल रहे हो ? एयरो-ड्रोम से ? कलकत्ता से दिल्ली जा रहे हो । हाँ···· तो प्लेन अभी आया है । नहीं, यहाँ आने का समय नहीं है । एक प्लेन छोड़ नहीं सकते ?····हाँ····हाँ ····दिल्ली में मिलों के कोटा की बात करनी है । नहीं····नहीं····चले जाओ सीधे, वह काम अधिक आवश्यक है । ऐसी कोई बात नहीं । नहीं····

तबीयत ? तबीयत तो अभी वैसी ही है। डाक्टर ने आराम करने को कहा है तो आराम कर रहा हूँ। हाँ, कमज़ोरी बहुत है। डाक्टर का ख्याल है कि एक हफ्ता लगेगा। ठीक है, काम पूरा करके ही लौटना।

[रिसीवर रख देता है और फिर लेट जाता है।]

मानिकचन्द : सुना डाक्टर, यह मेरा लड़का मदन, यह भी यन्त्र बन गया है, भावनाहीन निष्प्राण। वह जानता है कि मैं बीमार हूँ। लेकिन उसके पास एक प्लेन छोड़कर अपने बीमार पिता को देख आने का समय नहीं है। पाँच लाख के वारे-न्यारे का सवाल है न!

[हँसता है]

जयलाल : [झुँझलाहट भरे स्वर में] अगर आप मेरी सलाह मानें तो टेलीफोन इस कमरे से हटवा दें।

मानिकचन्द : टेलीफोन इस कमरे से हटवा दूँ ? क्या कहते हो डाक्टर ? इस कमरे में मैं अपने को ज़िंदा दफ़न कर लूँ ? जानते हो ? एक मौत का-सा गहरा सन्नाटा कभी-कभी मैं इस कमरे में अनुभव करने लगता हूँ।

जयलाल : लेकिन····

मानिकचन्द : मैं जानता हूँ तुम क्या कहना चाहते हो ? लेकिन मैं कहता हूँ, मैं इस कमरे में नितान्त अकेला हूँ। यह नर्स जो रुपयों के लिए मेरी देखभाल करती

है, जो अपने पीले और मुर्झाए हुए होठों पर लगातार एक कृत्रिम मुस्कान का प्रदर्शन करती है ; जो मेरे नाराज़ होने पर और गाली देने पर बुरा नहीं मानती····यह नर्स मुझे प्रेतलोक की छाया की भांति दिखने लगती है। और उस समय एक अजीब तरह का भय जाग उठता है मेरे अन्दर। उस भय से त्राण पाने के लिए मैं टेलीफोन का रिसीवर उठाता हूँ, जीवित मनुष्यों से बात करके मैं यह अनुभव करता हूँ कि मैं जीवित हूँ। सोना, चांदी और न जाने क्या-क्या मैं खरीदता-बेचता हूँ। मृत्यु की निष्क्रियता के स्थान पर मैं जीवन की सक्रियता का आह्वान करता हूँ। शेयर्स का खेल खेलता हूँ, अपनी मिलों की गति-विधि का संचालन करता हूँ डाक्टर।

[अन्तिम वाक्य कहते-कहते मानिकचन्द उत्तेजित हो जाता है।]

जयलाल : आप अधिक उत्तेजित न हों।

मानिकचन्द : मैं उत्तेजित न हूँ डाक्टर ? यह उत्तेजना ही तो ज़िन्दगी है। जानते हो, इन दस दिनों में इस कमरे में लेटे-लेटे मैंने टेलीफोन से ही दस लाख पैदा किए।

जयलाल : दस लाख !

मानिकचन्द : बहुत बड़ी रकम है, सोचते होगे डाक्टर !

[टेलीफोन की घंटी बजती है। मानिकचन्द टेलीफोन का

रिसीवर उठाता है ।]

मानिकचन्द : हलो । ट्रंक ? मंसूरी से । हाँ····हाँ····मैं मानिक-चन्द बोल रहा हूँ । रानी ! आशीर्वाद । हाँ····हाँ ····अभी तबीयत वैसी ही है । न कोई खास सुधार हुआ है, न कोई खास बिगड़ी है । नहीं····चिन्ता की कोई ऐसी बात नहीं है । [हँसता है] इलाज चल रहा है, डाक्टर अभी यहीं है, हम दोनों बातें कर रहे हैं । हाँ, कलाकेन्द्र का उद्घाटन करवा रहे हैं····कर लो । हाँ, चन्दा तो देना ही होगा····इसी चन्दे के लिए तो तुमसे उद्घाटन करा रहे हैं । [हँसता है] दस हज़ार । कुल ? मैं तो समझे था बड़ी रकम मांग रहे होंगे । दे दो । अगले मंगल को आओगी····[उंगली पर गिनता है] सोम, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनिश्चर, रवि, सोम····मंगल ····नौ दिन । कोई बात नहीं, तभी चलना । नहीं, किसी तरह की तकलीफ नहीं । अच्छा····अच्छा ।

[रिसीवर रख देता है]

मानिकचन्द : दस हज़ार ! [हँसता है] सुना डाक्टर ! कितनी छोटी रकम है यह । दान में इतनी रकम बिना सोचे-विचारे दी जा सकती है । लेकिन एक दिन दस हज़ार की इसी छोटी-सी रकम ने मेरे भाग्य को बदल दिया था, इस रकम ने मुझे ज़मीन से उठाकर आसमान पर खड़ा कर दिया था ।

जयलाल : आपका जीवन घटनाओं से भरा हुआ मालूम देता है।

[एक अजीब तरह से मानिकचन्द डाक्टर को देखता है और धीरे-धीरे उसके मुख पर मुस्कराहट आती है, कुछ देर तक वह इसी प्रकार डाक्टर को देखता रहता है।]

मानिकचन्द : घटना····डाक्टर ! जीवन है ही क्या ? कर्म····कर्म ····कर्म। वही जीवित है जिसके जीवन में कर्म है। कर्म में अच्छे-बुरे का सवाल वे उठाते हैं जो निष्क्रिय हैं, जो मृत्यु के मुख में पड़े हुए हैं।

जयलाल : आपसे सहमत होने की इच्छा नहीं होती, यद्यपि आपकी बात में सत्य दिखता है, और अगर झूठ है तो वह ऐसा कि आसानी से पकड़ा नहीं जा सकता।

मानिकचन्द : मेरे अनुभवों से तुम्हें सहायता मिल सकती है डाक्टर ! मेरी कहानी एक सफल व्यक्ति की कहानी है।

जयलाल : किसी दिन मैं आपकी कहानी सुनूँगा। आज आप काफ़ी बातचीत कर चुके।

मानिकचन्द : नहीं डाक्टर, अभी तो मैंने अपनी बात शुरू ही नहीं की। डाक्टर यह अपनी बात ! न जाने कब से मैं अपनी बात सुनाना चाहता था लेकिन हिम्मत नहीं पड़ती थी। और आज····आज जब अनायास बात उठ पड़ी है, न जाने क्यों मेरे मन में यह इच्छा प्रबल हो उठी है कि अपने अन्दर वाला

रहस्य, जो न जाने कब से भीतर-ही-भीतर घुट रहा है, उसे मुक्त कर दूँ।

जयलाल : मेरे ख़्याल से अपना रहस्य व्यक्तिगत चीज है, उसे अपने पास ही रहना चाहिए।

मानिकचन्द : मैं जानता हूँ डाक्टर, और इसीलिए इस रहस्य को अपने अन्दर ही रखे रहा हूँ अब तक ; लेकिन इस नित्य प्रति सघन होने वाले अन्धकार से मैं बुरी तरह घबरा गया हूँ। आज मैं अपने उस रहस्य को प्रकाश में लाना चाहता हूँ। डाक्टर, तुम्हें मेरी कहानी सुननी ही पड़ेगी।

जयलाल : अच्छी बात है।

मानिकचन्द : बीस वर्ष पहले की बात है। मैं उन दिनों एक फ़र्म में क्लर्क था। रानी थी, मेरी पत्नी, मदन था मेरा लड़का····और मेरी लड़की शोभा थी। पच्चीस रुपये महीने पाता था····कुल पच्चीस रुपया डाक्टर····जितना रुपया तुम एक दिन में मुझ से एक नर्स को दिलवा देते हो। फिर भी हम लोगों का वह छोटा-सा परिवार कितना सुखी था···· और फिर एक दिन····

[कमरे का प्रकाश मन्द पड़ता है धीरे-धीरे स्टेज धुंधला पड़ता जाता है···सब कुछ शान्त है।]

[पटाक्षेप]

दूसरा दृश्य

[परदा उठता है । एक कमरा जिसमें एक चारपाई पड़ी है । चारपाई पर दो बिस्तर लपेटे हुए रक्खे हैं । चारपाई बांई वाली दीवार मे लगी हुई है···दीवार पर खूंटियाँ हैं जिन पर कपड़े टंगे हैं । चारपाई के सिरहाने टीन के तीन पुराने ट्रंक एक-दूसरे पर रक्खे हैं···चारपाई का सिरहाना दर्शकों की ओर है । सामने वाली दीवार मे मिली हुई एक लकड़ी की टूटी-सी अलमारी है जिसमें एक सस्ते किस्म का ताला लगा हुआ है ।

फ़र्श पर चारपाई से मिली हुई एक फटी हुई दरी बिछी है । दांई ओर वाली दीवार में दर्शकों की ओर एक दरवाज़ा है जो अन्दर से बन्द है। दांई ओर वाली दीवार मे मिली हुई पीछे की ओर दो पुरानी कुर्सियां पड़ी हैं ।

कमरे की दीवार कुछ मैली सी है, बीच-बीच का पलस्तर गिर गया है । दीवार पर चार सस्ते किस्म की तस्वीरें लगी हैं ।

दरी पर शोभा बैठी हुई गुड़िया को सजा रही है । शोभा की उम्र प्रायः पांच वर्ष है । शोभा घंघरिया और कुरती पहने हुए है जो काफी भीजे हुए हैं । बांई ओर की दीवार में पीछे की ओर एक दरवाज़ा है, मदन उस दरवाज़े के साथ खड़ा है । मदन की उम्र प्रायः आठ साल की है । उसके हाथ में एक किताब है । वह एक जांघिया और बनियान पहने हुए है ।]

मदन : शोभा···ओ शोभा !

[शोभा मदन को देख कर मुँह बनाती है, लेकिन बोलती नहीं है ।]

मदन : राम करे तेरा मुँह ऐसा ही हो जाय ।

शोभा : तुम्हारा मुँह ऐसा हो जाय। देखो कैसी सुन्दर गुड़िया है।

मदन : उँह····इससे सुन्दर वह हलुआ है जो माँ बना रही है।

[शोभा उठ कर मदन के पास जाती है।]

शोभा : हलुआ····सच्ची····माँ हलुआ बना रही है ?

मदन : हाँ····हाँ····हलुआ। जा थोड़ा-सा माँग ला। हम दोनों खायँगे। शोभा रानी बड़ी अच्छी है।

शोभा : तुम्हीं माँग लाओ दादा····मैं अपनी गुड़िया सजा रही हूँ।

[मदन जाकर गुड़ियों के पास बैठ जाता है।]

मदन : तुम्हारी गुड़िया मैं सजाए देता हूँ। माँ पकौड़ी बना रही है····पकौड़ी, गरमागरम।

शोभा : पकौड़ी भी····सच !

मदन : और नहीं क्या झूठ। [शोभा की ओर मुँह बनाता है] जा माँग ला····मुझसे तो नाराज़ होती थी। मेरे लिए भी ले आना।

[बाईं ओर वाले द्वार से रानी का प्रवेश। रानी की अवस्था प्रायः पच्चीस-छब्बीस साल की है। इकहरा बदन, साधारण रूप से लम्बी-सी। सुनहला रंग है····किसी हद तक सुन्दर कही जा सकती है। एक मैली-सी धोती पहने है, कपड़े अस्त-व्यस्त हैं, मुख पर पसीने की बूँदें झलक रही हैं। उसके हाथ में दो बरतन हैं····एक में हलुआ

है और दूसरे में पकौड़ियाँ हैं । कमरे में आकर वह शोभा और मदन को देखती है । फिर मदन से कहती है ।]

रानी : क्यों रे मदन····फिर शोभा की गुड़ियों को हाथ लगाया····अभी रोने लगेगी । अपनी किताब पढ़ बैठ कर ।

[रानी बरतन ज़मीन पर रख कर अलमारी खोलती है फिर अलमारी में दोनों बरतन रखती है । इस बीच में मदन और शोभा उसके पैरों से लिपट कर खड़े हो जाते हैं ।]

शोभा : माँ पकौड़ी दो····पकौड़ी ।

मदन : माँ, थोड़ा-सा हलुआ दो····बस थोड़ा-सा ।

रानी : अभी नहीं····बाबूजी आ जायं तब हम सब साथ बैठ कर खायँगे चाय के साथ । देखो चाय का पानी गरम हो रहा है ।

मदन : लेकिन माँ····मुझे भूख लगी है····थोड़ा-सा दे दो ।

रानी : [कड़े स्वर में] अभी बिल्कुल नहीं मिलेगा । बैठो जाकर । [बाईं ओर वाले दरवाज़े के बाहर देखती है] अभी तक नहीं आये····बिल्कुल शाम हो गई । बड़ी देर लगा दी दफ्तर में । कैसे सब होगा ? इतना प्रबन्ध करना है ।

[दाईं ओर वाले दरवाजे में खटखटाहट होती है ।]

मदन : लो आगए बाबूजी····आ गए ।

[मदन दौड़ कर दरवाज़ा खोलता है । मानिकचन्द का प्रवेश । मानिकचन्द की उम्र तीस-इकतीस साल की है । पाजामा, कमीज़, खुले गले का कोट पहने है, सिर पर फैल्ट कैप है जो काफ़ी पुरानी हो गई है और जिसका चंदवा उठा है तथा उस पर तेल के दाग़ हैं । कपड़े बहुत साधारण ढंग के हैं, मोटे से । मानिकचन्द का मुख तमतमाया-सा है । एक प्रकार का उद्वेलन है उसके चेहरे पर । साँस जोरों से चल रही है ।]

मदन : अब तो हलुआ लाओ माँ····बाबूजी भी आगए हैं ।

[शोभा और मदन मानिकचन्द के पैरों से लिपट जाते हैं ।]

रानी : अरे छोड़ो भी····थके हुए आए हैं बेचारे दिन भर के ।

मदन : बाबूजी, माँ दिन-भर आपके लिए नाश्ता बनाती रही हैं ।

रानी : कितना पाजी है । अभी से बतला दिया ।

[मानिकचन्द से] जल्दी से मुँह-हाथ धो लीजिये, कितना मुँह उतर गया है । मैं तब तक नाश्ता सजाती हूँ ।

मानिकचन्द : ज़रा पाँच मिनट ठहरो····थोड़ा-सा सुस्ता लूँ ।

[मानिकचन्द चारपाई पर बैठ जाता है, रानी पंखा झलने लगती है ।]

शोभा : माँ, पकौड़ी ! हलुआ और पकौड़ी ।

मदन : बाबूजी, हमें माँ ने नहीं दिया, हमें भूख लगी है। खुद भी नहीं खाया। बोलीं--बाबूजी आ जायं तब। माँ, अब निकालो।

रानी : [हँसती है] बड़े शैतान हैं। [उठकर अलमारी की ओर बढ़ती है। अलमारी के पास पहुँचकर मानिकचन्द की ओर घूमती है] सुना। किशन भइया का विवाह है, माताजी की चिट्ठी आई है। एकाएक तै हो गया। पन्द्रह दिन बाद शादी है, मुझे फौरन बुलाया है।

मानिकचन्द : फ़ौरन बुलाया है ? अरे कुछ वक्त तो दिया होता।

रानी : क्या करें····वक्त मिलता तो देते। देखिए, आप फिर चले आइएगा, मैं बच्चों के साथ कल चली जाऊँगी।

मानिकचन्द : अच्छी बात है, कल सुबह की गाड़ी से चली जाना। आज रात को सामान-वामान ठीक कर लो।

रानी : अजीब आदमी हैं आप, कुछ किराए-विराए का इन्तज़ाम तो करना पड़ेगा। मेरे पास एक पैसा नहीं है। फिर छोटे भाई का विवाह है, कुछ देना-लेना भी तो होगा। कल इन्तज़ाम कर दीजिएगा, शाम की गाड़ी से चली जाऊँगी, पिताजी को तार दे दीजिएगा। वह स्टेशन पर आजायँगे। अरे····

आपका चेहरा कितना पीला पड़ गया है । क्या तबीयत ठीक नहीं ?

मानिकचन्द : कुछ नहीं, यों ही ज़रा सिर में दर्द है, थक गया हूँ, बड़ा काम करना पड़ता है । ठीक हो जायगा ।

रानी : नाश्ता कर लीजिए तो आपका सिर दबा दूँ । इतनी मेहनत क्यों करते हैं आप ? सुबह से लेकर रात तक काम करना । कुछ गुलामी लिखा ली है आपने ।

मानिकचन्द : [रूखी हँसी हँसता है] आदमी वही उन्नति करता है जो ज़्यादा-से-ज़्यादा मेहनत कर सके । आगे चल कर तो मुझे इससे भी ज्यादा मेहनत करनी पड़ेगी ।

रानी : मैं कहती हूँ आप मेहनत मत कीजिए । और मेरे लिए रुपयों की चिन्ता करने की भी ज़रूरत नहीं है । एक गहना मैं दे दूँगी, उसी से आने-जाने का और लेने-देने का खर्चा निकल आयगा ।

मानिकचन्द : गहना देने की आवश्यकता अब तुम्हें नहीं पड़ेगी, प्रबन्ध हो जायगा ।

[बाहर से कोई दरवाज़ा खटखटाता है । साथ में आवाज़ भी आती है····बाबू मानिकचन्द····बाबू मानिकचन्द ।]

मानिकचन्द : अरे, यह तो मैनेजर साहेब की आवाज़ मालूम होती है । तुम लोग अन्दर जाओ ।

[रानी दोनों बच्चों का हाथ पकड़ कर जल्दी से बाईं ओर वाले दरवाज़े से अन्दर चली जाती है । मानिकचन्द

39855
21-6-7

दाहनी ओर वाला दरवाजा खोलता है। मैनेजर, किशोरी-लाल, एक सब-इन्स्पेक्टर पुलिस और दो पुलिस के सिपाहियों का प्रवेश। मैनेजर सूट पहने हुए एक पैंतीस-छत्तीस वर्ष का आदमी है। किशोरीलाल धोती और कुरता पहने हुए एक लम्बा-सा आदमी है, उम्र प्रायः चालीस वर्ष। रंग गोरा लेकिन चेहरा मुरझाया हुआ। उसके पैर काँप रहे हैं।]

मैनेजर : मुझे आपसे कुछ सवाल करने हैं बाबू मानिकचन्द।

मानिकचन्द : जी हुजूर। खैरियत तो है ?

मैनेजर : आज तुम दफ्तर से कै बजे चले थे ?

मानिकचन्द : जी साहेब ! मुझे शहर में कुछ ज़रूरी काम था, मेरी पत्नी मायके जाने वाली है अपने भाई की शादी में, उसके जाने के लिए रुपयों का इन्तज़ाम करना था। मैं साढ़े चार बजे यानी आध घंटे पहले वहाँ से चल दिया था।

मैनेजर : भगवानदास और रामलाल का कहना है कि जब वे चाय पीने के लिए सामने की दूकान पर गये थे तब तुम वहाँ से चले आये थे।

मानिकचन्द : जी ठीक बात है। जैसे ही ये लोग चाय पीने गये वैसे ही मैं वहाँ से चल दिया था। शिवदीन चपरासी से मैंने कह दिया था कि मुझे ज़रूरी काम से जाना है। आखिर बात क्या है ?

मैनेजर : कैशियर साहेब की सेफ से दस हजार रुपए निकल

गए । तुम्हें कुछ मालूम है ?

मानिकचन्द : कैशियर साहेब की सेफ से दस हजार रुपए निकल गए ? बड़े ताज्जुब की बात है । कहीं किसी का भुगतान तो नहीं किया है आपने कैशियर साहेब ?

किशोरीलाल : भुगतान ! बाबू मानिकचन्द, आज दोपहर को ही तो बैंक से मैं दस हजार रुपया लाया था, कल दफ्तर की तनख्वाह बँटनी है, तुम्हारे सामने ही तो मैंने वह रुपया सेफ में रखा था ।

मानिकचन्द : हाँ, आप बैंक गये थे । रुपया किस समय आपने सेफ में रखा यह तो मैंने नहीं देखा । लेकिन ताज्जुब की बात है । सेफ विलायती है, उसकी चाबी आपके ही पास रहती है, और सेफ न टूट सकता है, न खुल सकता है ।

किशोरीलाल : साहेब, मैं कसम खा कर कहता हूँ कि वह रुपया आफिस के ही किसी आदमी ने चुराया है । जब आपने मुझे स्टेशन भेजा था तब मैं गलती से चाबियों का गुच्छा मेज की ड्रार में ही छोड़ गया था ।

मानिकचन्द : साहेब, आप मेरे घर की तलाशी ले सकते हैं····मैं तो सिर्फ इतना कह सकता हूँ । मैं समझता हूँ कि कहीं कोई गलती हुई है । भगवानदास और रामलाल दोनों ही ईमानदार आदमी हैं । शिवदीन चपरासी पर शक किया ही नहीं जा सकता है । एक मैं रह जाता हूँ ।

मैनेजर : नहीं, नहीं, मुझे तुम पर शक नहीं है, मैं तो तुमसे पूछ-ताछ करने चला आया था। फिर हम लोग तुम्हारी तलाशी ले भी नहीं सकते। लेकिन अच्छा ही होगा कि तुम खुद अपनी तरफ से तलाशी देकर दुनिया के शक से मुक्त हो जाओ।

मानिकचन्द : जी हाँ। रानी ! रानी !

[रानी का प्रवेश। वह सब लोगों को आश्चर्य से देखती है।]

मानिकचन्द : रानी, अपने ट्रंक और अलमारी के ताले खोल कर इन लोगों को दिखा दो। दफ्तर से दस हजार रुपए की चोरी हो गई है।

[रानी चुपचाप अपने ट्रंक खोलती है, पुलिस वाले तलाशी लेते हैं।]

मानिकचन्द : यही एक कमरा है मैनेजर साहेब, भीतर आँगन है और रसोई है। आँगन में मेरे बच्चे हैं, अगर आप चाहें तो वहाँ की तलाशी ले लें।

मैनेजर : नहीं, वहाँ तलाशी लेने की ज़रूरत नहीं है। मैं जानता हूँ कि यह तुम्हारा काम नहीं है। तुम्हें इतना कष्ट हुआ, इसका मुझे दुःख है।

पुलिस वाला : यहाँ तो कुछ भी नहीं है।

मैनेजर : मैं जानता था। बाबू किशोरीलाल, मुझे बड़ा दुःख है। आपकी कहानी पर विश्वास कौन करेगा ? अच्छा होगा कि यह रुपया आप किसी तरह जमा कर दें। अभी भी मैं यह मामला दबा सकता हूँ।

किशोरीलाल : हे भगवान ! मेरे पास रुपया कहाँ है साहेब ? मैं कहीं का नहीं रहूँगा, कहीं का नहीं रहूँगा ।

मैनेजर : मैं मजबूर हूँ बाबू किशोरीलाल, बिल्कुल मजबूर हूँ ।

[मानिकचन्द को छोड़ कर सब लोग जाते हैं । रानी एक कोने में सिर झुकाए मौन खड़ी है ।]

मानिकचन्द : रानी, बड़ी भूख लगी है, बच्चों को बुला लो । हे भगवान् !

[रानी अन्दर जाती है । रानी के जाते ही मानिकचन्द अपने पाजामे के अन्दर से दस हजार रुपया निकालता है]

मानिकचन्द : बेवकूफ कहीं के । गए, ठीक ही हुआ । अब कहीं कोई अभाव नहीं, गुलामी नहीं, विवशता नहीं ।

[मानिकचन्द एक ट्रंक खोलकर उसमें रुपया डालकर जल्दी से ट्रंक बन्द कर देता है । रानी का मदन और शोभा के साथ प्रवेश । रानी के हाथ में टी पॉट है जिसे वह दरी पर रख देती है । वह अलमारी की ओर जाती है, बच्चे दरी पर बैठते हैं । मानिकचन्द भी दरी पर बैठ जाता है ।]

रानी : यह दफ्तर में कैसी चोरी हो गयी ।

मानिकचन्द : कल तनख्वाह मिलने वाली है न । उसी के लिए कैशियर साहेब दस हजार रुपया लाये थे । उन्हीं के सेफ़ से यह रुपया निकल गया । बेचारा किशोरी-लाल बुरा फँसा ।

[रानी नाश्ता लाकर दरी पर रखती है ।]

रानी : लेकिन दफ्तर से चोरी कैसे हो सकती है, वह भी दिन-दहाड़े ।

मानिकचन्द : असावधानी से । असावधानी से सब कुछ हो सकता है । लोगों का पैर फिसल जाता है, लोग मोटर के नीचे आ जाते हैं, लोग सब कुछ गंवा देते हैं । यह सब असावधानी है । दुनिया में जो सावधान नहीं है उसका विनाश निश्चित है ।

[रानी चाय बनाती है····बच्चे खाना शुरू करते हैं । मानिकचन्द भी खाना शुरू कर देता है, चाय बनाते हुए रानी पूछती है ।]

रानी : और मान लो वह रुपया किशोरीलाल ने ही चुराया हो ?

मानिकचन्द : मैनेजर भी ऐसा समझते हैं । और मैनेजर ही क्यों, सभी ऐसा समझेंगे, अदालत ऐसा समझेगी····· दुनिया ऐसा समझेगी । लेकिन मैं जानता हूँ कि यह रुपया किशोरीलाल ने नहीं चुराया । यह रुपया किसी दूसरे आदमी ने चुराया है, और जिसने यह रुपया चुराया है वह बुद्धिमान है क्योंकि उसे पकड़ा नहीं जा सकता । उसे शायद बड़ा बनने के लिए रुपयों की ज़रूरत रही हो, और इन रुपयों से वह शायद अपने को बड़ा बना सके । शायद क्यों···· वह निश्चय अपने को बड़ा बना सकेगा·····निश्चय अपने को बड़ा बनायगा ।

[मानिकचन्द अपना अन्तिम वाक्य कहते हुए उत्तेजित होकर ज़मीन पर अपना हाथ पटकता है ।]

रानी : यह आपको क्या हो गया जो आप इतने उत्तेजित हो रहे हैं ? तो इसका यह अर्थ कि किशोरीलाल ने यह रुपया नहीं चुराया । बेचारा किशोरीलाल !

मानिकचन्द : बेचारा किशोरीलाल, बेवकूफ किशोरीलाल । भला किशोरीलाल, असफल किशोरीलाल । यह नेकी और ईमानदारी, यह सीधापन और भलाई ····· ये सब अभिशाप है·····अभिशाप रानी । बड़ा वह बन सकता हैं जिसमें धर्म-कर्म, सचाई, ईमानदारी·····इन सबका नितान्त अभाव हो, जो झूठ बोल सकता हो, जो धोखा दे सकता हो, जो चोरी कर सकता हो, जो गला काट सकता हो । और यह सब करते हुए उसके मुख पर शिकन न आवे ।

[अर्ध विक्षिप्त-सा मानिकचन्द हँसता है । रानी चाय का प्याला मानिकचन्द की ओर बढ़ाती है लेकिन मानिकचन्द हँसता जाता है, हँसता जाता है । मदन और शोभा ठिठक कर आश्चर्य से मानिकचन्द को देखते हैं, फिर डर कर खड़े हो जाते हैं । रानी भी खड़ी हो जाती है और बच्चों का हाथ पकड़ कर आश्चर्य से मानिकचन्द को देखती है ।]

[पटाक्षेप]

तीसरा दृश्य

[प्रथम दृश्य वाला कमरा। मानिकचन्द तकिए के सहारे आधा बैठा और आधा लेटा है। डाक्टर जयलाल कुरसी पर बैठा हुआ पीछे खिड़की के बाहर देख रहा है जहाँ पानी जोर से गिरने लगा है। मानिकचन्द पागल की भाँति हँस रहा है।]

मानिकचन्द : सुना डाक्टर, कितनी सफाई के साथ मैंने वह दस हजार रुपया उड़ा दिया। और उस बेचारे नेक, ईमानदार और धार्मिक किशोरीलाल कैशियर को तीन साल की सजा हुई।

[जयलाल उत्तेजित होकर खड़ा हो जाता है।]

जयलाल : आपकी तबीयत तो ठीक है सेठ जी।

मानिकचन्द : मैं प्रलाप नहीं कर रहा डाक्टर, मैं केवल अपनी कहानी सुना रहा हूँ। यह एक सफल और इज्जतदार करोड़पति की कहानी है। अगर चाहो तो तुम्हें इस कहानी से बहुत बड़ी सीख मिल सकती है।

[जयलाल कठोर दृष्टि से मानिकचन्द को देखता है।]

जयलाल : अगर दुनिया के लोग आपके पापों को सीखने लगेंगे तो इस दुनिया के नष्ट होने में समय नहीं लगेगा।

मानिकचन्द : पाप-पुण्य, खूब शब्द हैं डाक्टर, जो अकर्मण्यों ने गढ़े हैं। जो कर्म करता है उसके लिए पाप-पुण्य

का कोई अर्थ नहीं । वह तो कर्म करता है। निरन्तर कर्म करता है, बिना सही गलत की विवेचना किये हुए। वे जो अकर्मण्य हैं, जो कायर हैं, जिनमें झिझक है, वही यह सब पाप-पुण्य का किस्सा उठाते हैं ।

जयलाल : मैं आपकी बात सुन कर पागल हो जाऊँगा, मुझे ऐसा लगता है ।

[मानिकचन्द हँस पड़ता है । वह थोड़ी देर तक डाक्टर को देखता है फिर कहता है।]

मानिकचन्द : बस इतने ही से घबरा गए डाक्टर । तुम तो चीर-फाड़ करते हो, तुमने न जाने कितने आदमियों को मरते हुए देखा होगा, तुम किस तरह घबरा गए ? बैठो भी ।

जयलाल : सेठजी, मैंने शरीरों को मरते, नष्ट होते देखा है, यह डाक्टरी शरीर के विकार से सम्बन्ध रखती है, आत्मा के विकार से इसका कोई सम्बन्ध नहीं है ।

मानिकचन्द : आत्मा ! डाक्टर इस शरीर से पृथक् आत्मा का अस्तित्व ही कहाँ । हाँ, तो तुमने अभी कहा था कि अगर लोग मुझ से सीख लेने लगें तो दुनिया के नष्ट होने में समय नहीं लगेगा । शायद तुमने ठीक कहा था । लेकिन मैं कहता हूँ कि लोग मुझ-से सीख लेने को तैयार ही कहाँ हैं ? और फिर

इस सीख को बुद्धिमान आदमी ही ग्रहण कर सकता है, लेकिन बुद्धि का इस दुनिया में बुरी तरह अभाव है। है न डाक्टर ?

जयलाल : [व्यंग के साथ] आप बुद्धिमान आदमी हैं सेठजी, क्षमा कीजिएगा, जो मैं बुद्धिहीनता की बात कह गया।

मानिकचन्द : [डाक्टर के व्यंग की उपेक्षा करते हुए] कोई बात नहीं। तो मैं अपनी बात सुना रहा था। हाँ, तो उसके बाद मैंने नौकरी छोड़ दी। यहां आकर मैंने एक्सपोर्ट और इम्पोर्ट का काम प्रारम्भ कर दिया। जिस फर्म में काम करता था वह एक्सपोर्ट और इम्पोर्ट का फर्म था।

जयलाल : जी हाँ, मैं जानता हूँ कि वह एक्सपोर्ट और इम्पोर्ट का फर्म था।

मानिकचन्द : तुम कैसे जानते हो डाक्टर ? बोलो, तुम कैसे जानते हो ?

जयलाल : बात यह है·····बात यह है कि आप ही अकेले बुद्धिमान नहीं हैं, थोड़ा बहुत मनोविज्ञान मैं भी समझने लगा हूँ। शरीर के बिना आत्मा का कोई अस्तित्व नहीं·····आप ही ने तो कहा था। लोगों के शरीर का इलाज करते-करते उनकी आत्मा की भी झलक मिल जाया करती है। जब आप कहते हैं कि आपने एक्सपोर्ट-इम्पोर्ट का

काम प्रारम्भ किया तब इसके अर्थ यही हैं कि आपने अपने एक साथी को बरबाद करके रुपया ही नहीं लिया, आपने अपने फर्म को नुकसान पहुँचा कर उसका कारोबार भी हड़प लिया ।

मानिकचन्द : [हँसता है] मान गया डाक्टर तुम बड़ी जल्दी बुद्धिमान बन गए । कितनी आसानी से तुमने सारी बात समझ ली । नौकरी छोड़ते समय मैं अपने फर्म के आवश्यक कागजों की नक्ल भी लेता आया था ।

जयलाल : आप बड़ी हिम्मतवाले आदमी हैं ।

मानिकचन्द : हाँ डाक्टर । जीवन में सफल वही होता है जिसमें हिम्मत हो और वह हिम्मत भी अपराध करने की हिम्मत हो । अमीर वह बन सकता है जिसको न ईश्वर पर विश्वास हो, न धर्म पर, न ईमानदारी पर । केवल एक देवता होता है उसका····· पैसा ।

जयलाल : बहुत से लोग इसे नहीं मानते ।

मानिकचन्द : जो नहीं मानते वे कंगाल हैं, वे अभावग्रस्त हैं । वे सिर्फ चीखते-चिल्लाते हैं, रोते-धोते हैं । जो आदमी ईमानदारी और धर्म पर कायम रहता है वह न ईमानदार कहलाता है, न धर्मात्मा कहलाता है । इज्जत और मान उसके हैं, जिसके पास पैसा है ।

[नर्स का प्रवेश]

नर्स : डाक्टर, पानी गरम हो गया ।

मानिकचन्द : [बिगड़ कर] तुम बिना बुलाए क्यों आई ?

जयलाल : [मुसकराते हुए] अब उसे ठंडा होने को रख दो । जब ठंडा हो जाय तब आना ।

[नर्स चली जाती है]

मानिकचन्द : जब ठंडा हो जाय तब आना । तुम अब आवश्यकता से अधिक बुद्धिमान आदमी होते जा रहे हो डाक्टर । [हँसता है] तो डाक्टर यहाँ आकर मैं पैसा पैदा करने में लग गया । मैंने दिन नहीं देखा, रात नहीं देखी, मैंने धर्म नहीं जाना, ईमान नहीं जाना । मैंने पाँच का माल दिया और पचास वसूल किये । मैंने सोने के दाम में पीतल बेचा । मैंने कम्पनियाँ बनाईं और फेल कीं । मैंने समय और परिस्थिति का पूरा-पूरा लाभ उठाया । और मैं बढ़ता गया····बढ़ता गया ।

जयलाल : आप पकड़े नहीं गए ?

मानिकचन्द : पकड़ा वह जाता है जो मूर्ख होता है, जो पैसे का उचित उपयोग नहीं कर सकता ।

जयलाल : मैं समझा नहीं आपकी बात ।

मानिकचन्द : इतनी ज़रा-सी बात भी नहीं समझ सके डाक्टर ! याद रखना, दुनिया में कोई ऐसा आदमी नहीं जो खरीदा न जा सके । मैंने यह कभी नहीं समझा

कि पैसे की आवश्यकता सिर्फ मुझे है, पैसे की आवश्यकता दूसरों को भी उतनी है जितनी मुझे है। हर एक आदमी अपने को पैसे के हाथ बेचने को उत्सुक है, लेकिन हरेक आदमी साहसी नहीं है। वे जो धर्मात्मा कहलाते हैं, ईमानदार कहलाते हैं·····वे कायर हैं। उनमें खुल कर खेलने की प्रवृत्ति नहीं है। पर जब पैसा उनके पास स्वयं आवे तब भी बिक जाने को तैयार मिलेंगे।

जयलाल : अब बस कीजिये·····मैं चलूँगा। पानी भी अब बन्द हो गया है।

[जयलाल उठ खड़ा होता है और आवाज देता है।]

जयलाल : नर्स !

नर्स : [नर्स का प्रवेश···वह पानी का बरतन लिये हुए है।] डाक्टर !

जयलाल : पानी का बरतन रख दो।

[बाहर से मोटर रुकने की आवाज। मानिकचन्द उस आवाज को सुन कर मुसकराता है···उसकी आँखें चमकने लगती हैं।]

मानिकचन्द : शायद गम्भीरमल आ गया। ढाई लाख रुपया नकद देने आ रहा है। लेकिन डाक्टर तुम्हारे सामने बात नहीं करेगा। [हँसता है] और अब पानी भी बन्द हो गया, अब तुम जा सकते हो।

[द्वार खुलता है। मदन का प्रवेश। मदन की अवस्था

प्रायः २८ वर्ष की है, स्थूल शरीर···मझोला कद । वह सिल्क का सूट पहने हुए है जिस पर अमेरिकन ढंग की टाई बंधी है । कपड़े कुछ भीगे हुए हैं । उसके मुख पर एक प्रकार की गम्भीरता है । मदन आकर मानिकचन्द के चरण छूता है ।]

मानिकचन्द : अरे तुम मदन ! मैं तो समझता था कि तुम दिल्ली के रास्ते में होगे । यहाँ कैसे रुक गए ?

मदन : इस पानी और तूफान में हवाई जहाज को यहीं रुक जाना पड़ा । यहीं हवाई जहाज उतारने में काफी मुसीबत हुई थी । कितनी ज़ोर की वर्षा हुई है । हवाई जहाज कल जायगा ।

मानिकचन्द : फिर ? तुम्हारा कल के दिन तो दिल्ली पहुँचना बहुत जरूरी है·····कैसे होगा ?

मदन : शाम की गाड़ी से जाऊँगा । कल सुबह पहुँच जाऊँगा दिल्ली । अरे, आप तो बड़े कमजोर हो गए हैं । क्यों डाक्टर साहेब ? क्या बीमारी है बाबूजी को ?

जयलाल : सेठ साहब को नर्व्स की बीमारी है । इसमें सेठ साहेब को आराम की सख्त ज़रूरत है । लेकिन यह आराम करते ही नहीं ।

मदन : मैं तो देख रहा हूँ कि कमरे में लेटे हुए हैं । और अधिक कैसा आराम चाहिए इन्हें ?

जयलाल : सेठ साहब को शारीरिक आराम की जितनी

आवश्यकता है उससे अधिक मानसिक आराम की आवश्यकता है। मैंने कहा न, उनको बीमारी स्नायु की है·····मानसिक। मानसिक थकान का प्रभाव शरीर पर भी पड़ता है।

मानिकचन्द : [हँसता है] और मैं कहता हूँ डाक्टर, मानसिक आराम केवल मृत्यु के बाद मिलता है। चेतना से युक्त मनुष्य के लिए मानसिक विश्राम के अर्थ होते हैं·····मृत्यु। डाक्टर की बात पर मत ध्यान दो मदन, डाक्टर का कहना है कि मैं अपने कमरे से टेलीफोन हटवा दूँ। अच्छा डाक्टर, कल सुबह फिर मिलना होगा।

जयलाल : मदन बाबू, सेठजी की तबियत में कोई सुधार नहीं हो रहा है। मेरी बात पर यह कभी हँस देते हैं, कभी झल्ला उठते हैं। आप इन्हें समझाइये, इन्हें पूर्ण विश्राम की आवश्यकता है।

मानिकचन्द : पूर्ण विश्राम के अर्थ होते हैं मृत्यु, उसका अभी समय नहीं आया डाक्टर! [हँसता है] अच्छा नमस्कार। और नर्स से कह दीजिए कि थोड़ी देर और कमरे में न आवे।

[डाक्टर दाहिनी ओर वाले दरवाजे से जाता है। बाहर जाकर वह दरवाजा बन्द कर देता है। मानिकचन्द डाक्टर के जाने के बाद बोलता है।]

मानिकचन्द : पूर्ण विश्राम! बेवकूफ कहीं का। पूर्ण विश्राम के

अर्थ ही वह नहीं समझता । मदन, कहो कलकत्ता का काम कैसा चल रहा है । उस बिजली की फैक्ट्री का क्या हुआ ? सेठ हीरालाल से मिले थे ?

मदन : जी हाँ, उनके पास इक्यावन प्रतिशत शेयर तो हैं, लेकिन वह सब शेयर नहीं बेचना चाहते, अपने लिए ग्यारह प्रतिशत शेयर रख कर चालीस प्रतिशत बेचने को तैयार हैं, इसलिए मैंने इन्कार कर दिया ।

मानिकचन्द : ठीक किया और देखो, बम्बई की रीन टीन कॉटन मिल बिक रही है·····एक करोड़ दस लाख माँगते हैं । मैंने नव्वे लाख लगाये हैं । बुलावाला सेठ यहाँ आया है । उससे फोन पर बात कर लेना ।

मदन : हाँ-हाँ, कर लूँगा, आप चिन्ता मत कीजिये । डाक्टर का कहना है कि आपकी तबियत गिरती जा रही है, बिना विश्राम किये आपकी तबियत नहीं सुधरेगी ।

मानिकचन्द : [वह बेवकूफ है] जिन्दगी को न वह समझता है न पहचानता है । जिन्दगी हलचल है, उथल-पुथल है ।

[जोर से बिजली कड़कती है और पानी फिर जोर से गिरने लगता है ।]

कितनी ज़ोर की आवाज़ हुई । बिजली कड़क

रही है, पानी बरस रहा है। इस तूफान की आवाज सुनते हो। जिन्दगी इसी तूफान की तरह है। और आराम·····मौत का एक घुटता हुआ सन्नाटा। अच्छा अब जाओ, कपड़े वदल डालो, कितना भीग गये हो। हाँ, गम्भीरमल आता होगा।

मदन : गम्भीरमल ? वह क्यों आ रहा है ?

मानिकचन्द : सुपरफाइन माल की पाँच हजार गाँठें चाहता है। पचास रुपया फी गाँठ ब्लैक की बात तै हो गई है, अढ़ाई लाख रुपया नकद लाता होगा।

मदन : क्या आपने सौदा पक्का कर लिया है ?

मानिकचन्द : क्यों·····सौदा पक्का करने की क्या बात है ? जब तक हाथ में रुपया न आ जाय तब तक सौदा पक्का न समझना चाहिए।

मदन : कलकत्ता में सौ रुपया फी गाँठ मिल रहा है। मैंने आप से पूछ कर सौदा पक्का करने को कहा था।

मानिकचन्द : कितनी गाँठें चाहते हैं वे लोग ? माल यहीं उठाना होगा उन्हें, वतला दिया है ?

मदन : जी हाँ, माल यहीं लेंगे वे लोग, और जितना माल हो सब-का-सब चाहते हैं।

[नर्स का प्रवेश]

क्षमा कीजिएगा सेठ साहब ! सेठ गम्भीरमल आये

हैं, कहते हैं आपने उन्हें जरूरी काम से बुलाया है।

मदन : मैं मिले लेता हूँ उनसे।

मानिकचन्द : नहीं, मैं खुद उनसे बात करूँगा। तब तक तुम कपड़े बदल कर चा-वा पीलो। ग्यारह बजे की गाड़ी से जाना भी तो है तुम्हें। [नर्स से] उन्हें यहाँ भेज दो।

[मदन बाईं ओर वाले द्वार से जाता है, नर्स दाहिनी ओर वाले द्वार से जाती है। नर्स के जाते ही गम्भीरमल का प्रवेश। गम्भीरमल स्थूलकाय मंझोले कद का आदमी है, छंटी हुई मूंछें, सिर पर पगड़ी है। बन्द-गले का कोट और धोती पहने है। उसके हाथ में एक अटेची केस है।]

गम्भीरमल : जै गोपालजी की सेठ मानिकचन्द ! कैसी तबियत है ?

मानिकचन्द : जै गोपाल की गम्भीरमलजी। सब भगवान् की दया है। तबियत तो अभी वैसी ही है। हाँ गिरी नहीं, यही क्या कम है।

गम्भीरमल : [अटेची केस खोल कर हज़ार-हजार रुपये के नोटों के बंडल निकालता हुआ] ये अढ़ाई लाख रुपये लाया हूँ·····सेठ साहेब। सहेज लीजिये। पाँच हजार गाँठें चाहिएँ।

मानिकचन्द : मुझे बड़ा दुःख है गम्भीरमलजी ! अभी मदन कलकत्ता से लौटा है, वहाँ के एक फर्म के साथ

उसने इन गाँठों का सौदा कर लिया है।

गम्भीरमल : यह कैसे हो सकता है ? आपने मेरे साथ सौदा तै किया है सेठजी ! आपकी बात का ज्यादा मूल्य है या मदन की बात का ? आपके वचन पर मैंने दूसरों से सौदा तै कर लिया है।

मानिकचन्द : [मुस्कराता है] तो आपने गल्ती की गम्भीरमलजी ! सौदा तब तक पक्का नहीं समझा जाता जब तक रुपया हाथ में न आ जाय। आप तो बड़े अनुभवी आदमी हैं। आपने यह सौदा पक्का करने के पहले दूसरों से सौदा करने की गल्ती क्यों की ?

गम्भीरमल : सेठ जी, हमारी इज्जत आपके हाथ में है। मदन बाबू ने जो सौदा किया है, उसे आप तोड़ दीजिये।

मानिकचन्द : कैसे तोड़ दूँ ? अढ़ाई हजार गाँठ तो उठ गईं··· या अभी उठ रही हैं। सौ रुपया फी गाँठ के हिसाब से अढ़ाई लाख रुपया भी मदन ने ले लिया है। बाकी माल बेचने का वचन मदन दे चुका है मुझ से पूछ कर।

[गम्भीरमल उत्तेजित हो उठता है।]

गम्भीरमल : सेठजी, यह अढ़ाई हजार गाँठें आपको मुझे देनी होंगी। मेरी इज्जत का सवाल है।

मानिकचन्द : अच्छी बात है, लेकिन आपको भी सौ रुपया फी

गाँठ देना पड़ेगा, मदन से कहे देता हूँ कि वह कलकत्ता से टेलीफोन मिला कर इन्कार कर दे।

गम्भीरमल : यह तो बड़ा अन्धेर है सेठ जी। आपने अपने मुँह से पचास रुपया फी गाँठ माँगा था……अपनी जबान आप फेर रहे हैं।

मानिकचन्द : [मुस्कराता है] कलकत्ता वालों से मदन की जबान आप फिरवा रहे हैं और मुझे अपनी जवान फेरने में दोष दे रहे हैं? गम्भीरमलजी, व्यापार में जबान भी रुपये से बँधती है। जब तक रुपया न मिल जाय तब तक इस जबान का कोई मूल्य नहीं होता।

गम्भीरमल : [नोट मानिकचन्द को दिखाते हुए] रुपया तो मैं आपके कहते ही ले आया हूँ …… अगर मैंने रुपया देने में देर की होती तो कोई कहने की बात थी।

मानिकचन्द : यह बात वहीं समाप्त हो गई। देखिए गम्भीरमलजी, मेरी तबियत ठीक नहीं है। इन दिनों काम-काज मदन देख रहा है। उसे झूठा बनना पड़ेगा……वह भी आपकी खातिर कर रहा हूँ। अढाई हजार गाँठ का अढाई लाख रुपया लेते आए हैं। सौदा करना है तो कर लीजिए, नहीं तो…… आप जानते ही हैं, मदन कुछ कर ले तो मैं जिम्मेदार नहीं हूँगा।

गम्भीरमल : नाराज न होइये सेठ जी, आप पचास की जगह साठ रुपया फी गाँठ लगा लीजिये ।

मानिकचन्द : सौ रुपये से एक पैसा कम नहीं । [लेटने के लिए तैयारी की मुद्रा बनाते हुए] कितनी जोर की वर्षा हो रही है ।

गम्भीरमल : जैसी आपकी मर्जी·····यह मेरी इज्जत का सवाल है, इस सौदे में मुझे अपनी गाँठ से भरना पड़ेगा । लीजिए, यह रुपया सकार लीजिए । आप अपने मिल के मुनीम को फोन कर दीजिये । मैं उसे दाम देकर गाँठें उठवा लूँ ।

[मानिकचन्द गम्भीरमल से रुपया लेता है और फिर डायल करता है ।]

मानिकचन्द : परमेश्वर, हाँ, सेठ गम्भीरमल को अढ़ाई हजार सुपर फायन की गाँठें बेच दो·····हाँ·····हाँ, मिल गया है । तुम इनसे एक्स मिल दाम ले लेना । हाँ, वह तुम्हारे पास आ रहे हैं ।

[मानिकचन्द रिसीवर रख देता है, फिर गम्भीरमल से कहता है ।]

माल तीन दिन के अन्दर उठवा लीजिए, अभी कलकत्ता वालों का आदमी नहीं आया है, अपनी पसन्द का माल ले लीजिए । अच्छा जै गोपालजी की !

गम्भीरमल : जै गोपालजी की सेठ जी ! आपसे पार पाना

असम्भव है सेठ जी !

[गम्भीरमल जाता है। बल लगा कर मानिकचन्द खड़ा होता है, फिर वह सेफ की तरफ धीरे-धीरे चलता है। गले में सोने की जंजीर में सेफ की चाबी लटक रही है, सेफ खोल कर वह अपने हाथ वाला रुपया गिनता है। उसके मुख पर एक कुरूप और घृणास्पद मुस्कान है।]

[पटाक्षेप]

दूसरा अंक

पहला दृश्य

परदा उठता है :

[मानिकचन्द का दफ्तर। पीछे की तरफ एक लम्बी-सी शीशे की खिड़की है जिस पर परदा पड़ा है। खिड़की के दोनों ओर दो लोहे के सेफ़ हैं। खिड़की के ऊपर व्यापारिक नक्शे टंगे हैं। सेफ से कुछ हट कर दाहिनी ओर और बाईं ओर दो छोटी मेजें पड़ी हैं। एक मेज के पीछे बाईं ओर वाली दीवार की ओर मुँह किये हुए लड़की बैठी है, उसके आगे एक टाइप राइटर है। दाहिनी ओर वाली दीवार से मिला हुआ एक सोफ़ा सेट पड़ा हुआ है। बाईं ओर वाली दीवार के बीचोबीच एक दरवाजा है जो बन्द है। बाईं ओर वाली दीवार से मिला हुआ, आगे की ओर एक किताबों का रेक है। दाहिनी ओर वाले सोफ़ा सेट के आगे एक दरवाज़ा है, जो बाईं ओर वाले दरवाजे के ठीक सामने है। उस दरवाजे के किवाड़ कमानीदार हैं।

कमरे के बीच एक बड़ी-सी सेक्रेटेरियट टेबिल पड़ी है। टेबिल पर दाहिनी ओर तीन टेलीफोन और एक डिक्टफोन है। बाईं ओर टेबिल के पीछे टेबिल से मिला हुआ एक रेक है जो कागज़ों और फाइलों से भरा हुआ है। मेज़ पर मदन बैठा है, और मदन आवश्यकता से अधिक चिन्तित है। मदन एक बुश कोट और पतलून पहने है। उसके सामने एक रजिस्टर खुला है और वह बड़े ध्यान से उसे देख रहा है। मदन की बाईं ओर शिवनाथ खड़ा है। शिवनाथ मानिकचन्द का हैड मुनीम है। शिवनाथ धोती-कुरता पहने है, नंगे सिर। उसकी अवस्था प्रायः साठ वर्ष की होगी, चेहरे पर झुरियाँ पड़ी हुईं, इकहरे शरीर का आदमी। मूंछ छोटी-छोटी लेकिन

बिल्कुल सफेद हो गयी हैं। मेज़ के पीछे चार कुर्सियाँ हैं गद्देदार, दो दाहिनी ओर और दो बाईं ओर हैं।]

मदन : [उत्तेजित स्वर में] बारह लाख·····बारह लाख का घाटा सोने में दे दिया।

शिवनाथ : [थके और भारी स्वर से] घाटा तो शायद पाँच लाख का हुआ है, बाकी का सोना सेठजी ने खरीदा था।

मदन : लेकिन वह सोना कहाँ है ?

शिवनाथ : इसका तो मुझे पता नहीं है छोटे बाबू·····मेरा ख्याल है सेठजी के पास ही होगा। मैं तो सेठ जी जैसा कहते रहे उसी तरह रकम चढ़ाता रहा। आप ही बताइये न !

मदन : मैं बताऊँ खाक। [पन्ना उलटता है] यह शेयरों का हिसाब है।

शिवनाथ : जी हाँ·····यह भी जैसा सेठ जी ने बताया वैसा लिख लिया है, जो कुछ पूछना हो वह सेठजी से पूछिये !

मदन : जो कुछ पूछना है सेठजी से पूछूँ। आप तो सिर्फ मेरी तबाही के मसीहा बन कर मेरे सामने आये हैं।

शिवनाथ : छोटे बाबू···अब मैं बूढ़ा हो गया हूँ, मुझे छुट्टी दीजिये। बीस वर्ष हो गए मुझे सेठजी के साथ। उनको करोड़पति बनते देखा है मैंने। तब भगवान्

जाने मैं किस काम का मसीहा था।

मदन : [नरम पड़ कर] अगर मैं उलझन में कुछ कह गया हूँ तो उसका इस तरह बुरा न मानिए मुनीम जी, आप मेरी मानसिक हालत तो समझ ही सकते हैं।

शिवनाथ : यही तो मैं भी कहता हूँ छोटे बाबू···इस तरह से बिगड़ने का समय नहीं है। बहुत बड़ी विपत्ति है, धीरज से काम चलेगा। जरा शान्त होकर पूरा हिसाब-किताब देख लीजिए, उसके बाद सोचिए कि क्या किया जाय।

मदन : [रजिस्टर देखता है] चौबीस लाख। चौबीस लाख का घाटा शेयरों में ? आपने उन्हें यह सौदा करने से रोका क्यों नहीं ?

शिवनाथ : छोटे बाबू···सौदा तो वे घर से टेलीफोन पर करते थे, मैं उन्हें रोकता कैसे ? एक-आध दफे मैंने घाटे की तरफ उनका ध्यान खींचा तो नाराज हो गए। डाक्टर साहेब ने भी कई दफे उनसे टेलीफोन को कमरे से हटवा देने को कहा, लेकिन वह भला हम लोगों की कब सुनने वाले हैं।

मदन : बारह लाख और चौबीस लाख···छत्तीस लाख हुए। [रजिस्टर के पन्ने उलटता है] कॉटन···यह काटन का हिसाब है।···अट्ठाईस लाख···अट्ठाईस लाख कॉटन पर। मुनीमजी···यह रुई का सट्टा भी इन्होंने कर डाला।

शिवनाथ : जी हाँ, कहते थे कि मिलों के लिए खरीद रहे हैं। लेकिन निकला यह कि वह खरीद सिर्फ सट्टे की थी। आप जानते ही हैं कि कितनी तेजी से रुई के दाम गिरे हैं।

मदन : छत्तीस और अट्ठाईस चौंसठ····चौंसठ लाख।

[रानी का प्रवेश। रानी के मुख पर पेंट है, लेकिन उसके मुख की झुर्रियाँ दिखने लगी हैं। शरीर पर कीमती आभूषण हैं, बीस वष पहले वाली रानी और अब की रानी की वेशभूषा में जमीन आसमान का अन्तर है। उसकी चाल में एक तरह की अकड़ है, मुख पर एक प्रकार की दृढ़ता है। वह स्थिर गति से मदन के पास आती है।]

रानी : चौंसठ लाख····यह चौंसठ लाख की क्या बात है ?

मदन : [झुंझलाए हुए स्वर में] बाबूजी ने अपनी बीमारी की हालत में चौंसठ लाख का घाटा दिया है···· यह उस घाटे का हिसाब है।

रानी : [एकाएक चौंक कर] चौंसठ लाख का घाटा ? असम्भव। [शिवनाथ की ओर देखती है] क्यों मुनीम-जी, यह मदन क्या कह रहा है···चौंसठ लाख घाटा ?

शिवनाथ : मालकिन जी, सत्तर लाख का घाटा है। छः लाख का घाटा तिलहन पर भी दिया है।

मदन : तिलहन पर छः लाख ?

शिवनाथ : आगे तिलहन का भी हिसाब है छोटे बाबू ।

रानी : [झुंझलाहट के साथ] मुनीम जी····आप मर गए थे जो आपने उन्हें इस पागलपन से नहीं रोका ?

शिवनाथ : जी, मुझे आप मरा हुआ ही समझ लीजिए । लेकिन जो लोग जिन्दा रहने का दावा करते हैं, वही रोक लेते उन्हें ।

रानी : यह सत्तर लाख का घाटा····यह सब क्या है ? मुनीमजी, यह सब कैसे हो गया ?

शिवनाथ : ठीक उसी तरह हो गया जिस तरह मुनाफा हुआ था मालकिन जी ! एक के बिगड़ने पर ही दूसरा बनता है ।

रानी : मुनीमजी ! कोई उपाय निकालिए । आपने उनका हमेशा साथ दिया है, इस दफे भी आप साथ दीजिए । कोई उपाय निकालिए ।

शिवनाथ : जी, उपाय तो बड़ा सरल है, आप लोग यह घाटा देने से इन्कार कर दें । यह घाटा सट्टे का है, कोई आपसे जबरदस्ती नहीं वसूल कर सकता है ।

[एक चपरासी का प्रवेश ।]

चपरासी : सेठ कस्तूरचन्द दफ्तर में आ गए हैं छोटे बाबू !

[चपरासी चला जाता है ।]

रानी : सेठ कस्तूरचन्द ! क्या वे दफ्तर में बैठ रहे हैं ?

[मदन मुनीम की ओर प्रश्न-सूचक मुद्रा में देखता है ।]

मुनीम : जी हाँ । सेठजी ने बीमारी की हालत में सेठ

कस्तूरचन्द जी से मिल का काम-काज देखने को कह दिया था। लेकिन···लेकिन···

मदन : लेकिन क्या ? साफ-साफ कहिये।

मुनीम : क्या कहूँ, कुछ समझ में नहीं आता। वह तो हम लोगों से इस तरह का व्यवहार करते हैं जैसे वही इस मिल के मालिक हों, मैंने सेठजी से शिकायत की तो उन्होंने उस पर ध्यान ही नहीं दिया।

रानी : अपने सगे-सम्बन्धी हैं इनकी बीमारी की हालत में अपने आड़े आए।

मदन : वह तो ठीक है, लेकिन काम-काज में और रिश्ते-दारी में फर्क है। उनका निजी काम-काज है, वह सम्हालें। मैं अभी उनसे बातें करता हूँ।

रानी : नहीं मदन; पहले अपने बाबूजी से बातें कर लो। वही उनसे बातें कर लें—आपसी मामला है, उसमें इतनी तेजी की आवश्यकता नहीं।

मदन : हूँ—अच्छा मुनीमजी, आप अभी कुछ कह रहे थे—

मुनीम : जी, मैं कह रहा था कि यह घाटा सट्टे का है, कोई आपसे कानूनन नहीं वसूल कर सकता। आप लोग यह घाटा देने से इन्कार कर दें।

[रानी और मदन एक दूसरे को थोड़ी देर तक देखते रहते हैं।]

मदन : इसमें हम लोगों की बड़ी बदनामी होगी, बदनामी

ही नहीं, हमेशा के लिए साख गिर जायगी मुनीम जी !

शिवनाथ : जी छोटे बाबू····साख की चिन्ता मत कीजिए, बाजार में सेठ मानिकचन्द से लोग डरते हैं, और इसी भय के कारण इज्जत करते हैं । लेकिन साख सेठ मानिकचन्द की न कभी रही है और न कभी रहेगी ।

[गम्भीरमल का प्रवेश । गम्भीरमल शिवनाथ की बात का अन्तिम भाग सुन लेता है ।]

गम्भीरमल : जी हाँ मुनीम जी, साख न सेठ मानिकचन्द की कभी रही है और न कभी रहेगी मदन बाबू ! अढ़ाई लाख रुपया नकद ब्लैक का दिया है, लेकिन माल एक सौ बीस काउंट की जगह एक सौ दस काउंट का है, मिल के मामले में भी जुआचोरी ।

मदन : तो आप माल वापिस कर दीजिए····एक सौ दस काउंट का ही माल हमारे यहाँ है । खरीदारों की कमी नहीं है ।

गम्भीरमल : बात एक सौ बीस काउंट के माल की हुई थी और उसी पर मैंने ब्लैक दिया था । मैं कल ही आपके यहाँ माल भिजवा दूँगा, लेकिन मेरा अढ़ाई लाख रुपया वापिस कर दीजिए ।

मदन : रुपए की बात आप सेठ मानिकचन्द से कीजिए··· उन्हीं को दिया था आपने यह रुपया ।

रानी : मुझे तो उन्होंने रुपये की बावत नहीं बतलाया। क्यों मदन, तुम्हारे सामने रुपया दिया था ?

मदन : मेरा मतलब है उन्हीं को यह रुपया दिया होगा। मुझे तो रुपये की बावत कुछ नहीं मालूम। क्यों मुनीम जी, आपको उन्होंने हिसाब में यह रकम दर्ज कराई है ?

शिवनाथ : जी, मुझे तो दर्ज नहीं कराई। वैसे जितना ब्लैक का रुपया मिलता है वह सब दर्ज करा देते हैं।

गम्भीरमल : इसके····इसके ये अर्थ हुए····कि····यह अढ़ाई लाख रुपया भी····हड़पने का इरादा है।

शिवनाथ : सेठ जी, हड़पना नहीं, सवाल न देने का है। कागज में नहीं दर्ज है, तो यह रकम नहीं मिली। लेन-देन लिखा-पढ़ी का होता है।

गम्भीरमल : मदन बाबू·····यह रुपया तो मैं धरवा लूँगा····· किस होश में हैं आप लोग ? मेरे ही साथ यह बेईमानी।

शिवनाथ : सेठ जी, जो ईमानदार होता है वह हरेक के साथ, और जो बेईमानी पर उतर आया है वह हरेक के साथ बेईमानी कर सकता है। आपमें ऐसी कौन-सी खास बात है कि आपके साथ बेईमानी न की जाय ?

गम्भीरमल : मदन बाबू····मैं कहीं का न रहूँगा, इस अढ़ाई लाख के धक्के को मैं न संभाल सकूँगा····मेरा तो टाट

उलट जायगा। मेरे ऊपर दया कीजिए।

मदन : गम्भीरमल जी, मैं बाबू जी से पूछूँगा, लेकिन हमारे ऊपर भी बड़ी विपत्ति है। सत्तर लाख का देना है····वही हिसाब देख रहा हूँ।

रानी : कैसा देना ? यह सट्टा तो जुआ है; और वह भी बीमारी की हालत में यह जुआ हुआ है। इसके देनदार हम किसी भी हालत में नहीं हैं।

[सब लोग आश्चर्य से रानी को देखते हैं। मुनीम फिर मुसकराता है।]

शिवनाथ : मालकिन ने बिल्कुल ठीक बात कही, बीमारी की हालत में उनका दिमाग खराब हो गया था। यानी····मुझसे तक कभी कुछ नहीं पूछा। आप निश्चिंत होकर बैठिए मदन बाबू····कोई कुछ नहीं कर सकता।

गम्भीरमल : लेकिन मेरा रुपया मुनीम जी····

शिवनाथ : जब न देना तै कर लिया है तब जैसे सब तैसे आप सेठजी। भला इस न देने में कैसा भेदभाव ?

गम्भीरमल : मैं मर जाऊँगा····मुझ पर दया कीजिये मदन बाबू····मैं मर जाऊँगा।

[गम्भीरमल मदन की ओर बढ़ता है, उसके पैर लड़खड़ाते हैं, और वह गिर पड़ता है। मूर्तिवत् सब लोग गम्भीरमल को देखते हैं।]

[पटाक्षेप]

दूसरा दृश्य

[परदा उठता है। सेठ कस्तूरचन्द के बंगले का लॉन। पीछे सेठ कस्तूरचन्द की कोठी का बरामदा है जो काफी बड़ा है और जिसमें कुर्सियाँ तथा मेजें पड़ी हैं। लॉन पर बेंत की बारह कुर्सियाँ पड़ी हैं, एक पर सेठ कस्तूरचन्द बैठे हैं। उनके सामने एक बेंत की मेज़ है, मेज़ पर चाँदी का एक पान का डिब्बा, तथा चाँदी का ही सिगरेट का डिब्बा रक्खे हुए हैं। सेठ कस्तूरचन्द धोती और बनियान पहने हैं, उम्र पचास वर्ष। इकहरा शरीर, लेकिन बाल खिचड़ी हो रहे हैं। मूंछ आधी हैं, आँखों में चश्मा चढ़ा है। सेठ कस्तूरचन्द का मुख सामने की ओर है। सेठ कस्तूरचन्द के पीछे उनका नौकर उनके सिर पर तेल मल रहा है और सिर दाब रहा है। सामने एक छोटी-सी मेज़ पर चाय की ट्रे रक्खी है जिस पर फल और मिठाइयाँ हैं। शोभा बैठी हुई फल काट रही है। फल की तश्तरी वह कस्तूरचन्द के सामने रखती है। शोभा की अवस्था लगभग २५-२६ वर्ष की है—शरीर कुछ स्थूल होने लगा है। सफेद चिकन की साड़ी पहने है। मुख पर आत्मविश्वास है। शरीर पर कीमती गहने हैं।]

कस्तूरचन्द : [तेल लगाने वाले से] अब बस करो·····बस करो ·····कह दिया न बस करो।

नौकर : बस सरकार बसै समझो! जरा-सा तेल और बाकी रह गया है।

कस्तूरचन्द : [सिर को झटका देता हुआ] जाओ, और पाँच मिनट बाद वह जो सब लोग हैं उन्हें भेज देना। [ठंडी साँस लेता हुआ] लाओ·····बड़ा थक गया हूँ।

शोभा : आप मेहनत भी तो बहुत करते हैं, लाला जी!

दिन-रात दौड़ते-धूपते बीतती है ।

कस्तूरचन्द : [फल खाते हुए] मेहनत न करूँ तो इतना बड़ा काम-काज कैसे सम्भले । सगुना अभी तक लौटा नहीं·····आज तीन महीने हो गये । कोई चिट्ठी आई है ?

शोभा : जी हाँ, स्विटजरलैंड से लिखा है कि मौसम बड़ा अच्छा है, मुझे बुलाया है । आपकी जैसी आज्ञा हो ।

कस्तूरचन्द : क्या बताऊँ·····यह सगुना आवारा निकल गया····· आवारा । चोरी, बेईमानी, धोखा-धड़ी से मैं पैदा करता हूँ और यह उड़ाता है ।

शोभा : पैसा खर्च के लिए ही होता है लाला जी ! लीजिये·····यह सेब बड़ा मीठा है·····पाँच रुपए सेर लाई हूँ ।

कस्तूरचन्द : पाँच रुपए सेर ! लुटा दोगी मुझे·····बस लुटा दोगी । हाँ तो फिर क्या सोचा श्रीमती शोभा सगुनचन्द ने । [हँसता है]

शोभा : आप जैसा कहें·····थोड़ा मन बहल जायगा ।

कस्तूरचन्द : तो चली जाओ·····लेकिन यह मानिक मिल का मामला कुछ अजीब ढंग ले रहा है, तुम्हारे जाने से मामला बिगड़ जायगा ।

[शोभा उठकर कस्तूरचन्द के पास जाती है···थोड़ी देर तक चुप खड़ी रहती है, फिर कहती है ।]

शोभा : लाला जी, आपने उनके नाम बाबू जी से मैनेजिंग

एजेंसी लिखाकर मुझे मुसीवत में डाल दिया है। मदन भइया और माता जी के सामने कौन-सा मुँह लेकर जाऊँगी ?

कस्तूरचन्द : [हँसता है] अरे अपना यही चाँद-सा मुखड़ा लेकर जाना। तुम भी तो मानिकचन्द की लड़की हो—जैसा लड़का वैसी लड़की। सगुनचन्द भी तो मानिकचन्द का दामाद है।

शोभा : लाला जी मुझे यह सब अच्छा नहीं लगता। मुझे मदन भइया का हिस्सा नहीं चाहिए—बिल्कुल नहीं चाहिए।

कस्तूरचन्द : मदन का हिस्सा—मदन का हिस्सा ! मैंने सत्तर लाख रुपया मानिकचन्द के घाटे का भरा है—अपने पास से।

[दाहिनी ओर से चार आदमियों का प्रवेश। सबसे आगे एक व्यक्ति है जो काला कोट और सफेद पतलून पहने है। उसकी उम्र प्रायः ५० वर्ष की है। इकहरे बदन का आदमी है। इसके हाथ में कुछ कागज हैं, वह वकील है। वकील के पीछे-पीछे तीन और व्यक्ति हैं। ये तीनों व्यापारी से दिखते हैं। तीनों के सिर पर पगड़ियाँ हैं। एक व्यक्ति धोती-कुर्त्ता पहने है, दूसरा लम्बा कोट और धोती पहने है, तीसरा सूट पहने है। पहले दो की अवस्था प्रायः तीस वर्ष की है। कस्तूरचन्द बैठा ही रहता है और हँस कर इन लोगों का स्वागत करता है।]

सब लोग : जै गोपाल जी की सेठ जी !

कस्तूरचन्द : जै गोपाल जी की--वकील साहब--आओ भाई हीरालाल जी, अहा हा गंगाप्रसाद जी--आइये, आओ बेटा शिवलाल, अच्छी तरह तो हो ।

[सब लोग बैठते हैं । शोभा वहाँ से चली जाती है]

कस्तूरचन्द : कहिए वकील साहब—देख लिया यह दस्तावेज आपने !

वर्काल : इस दस्तावेज में कहीं कोई गलती नहीं, इससे किसी भी हालत में इन्कार नहीं किया जा सकता कस्तूरचन्द जी !

कस्तूरचन्द : इसकी रजिस्ट्री नहीं हुई है वकील साहब । बिना रजिस्ट्री कराए यह दस्तावेज बेकार है ।

वकील : जी हाँ, मैंने तो पहले ही कहा था कि इसकी रजिस्ट्री हो जानी चाहिए ।

कस्तूरचन्द : रजिस्ट्री मैं कैसे करा लेता, इस दस्तावेज पर मैंने मानिकचन्द के दस्तखत ले लिये, यही क्या कम है । [इस बार कस्तूरचन्द इन तीनों आदमियों की ओर देख कर मुसकराता है] आप लोग तो जानते ही हैं । अब शर्मा जी यह बतलाइए कि स्थिति क्या है ?

वकील : स्थिति ? मिल में तो आप बैठने लगे हैं ?

कस्तूरचन्द : हाँ, और मैनेजिंग डाइरेक्टर की हैसियत से मैंने पन्द्रह दिनों से काम भी सम्भाल लिया है ।

वकील : [तीनों व्यक्तियों की ओर देखता है] आप लोग अपनी-

अपनी रकमों की अदायगी की रसीद सेठ कस्तूरचन्द जी को दे दें। इससे इतना तो साबित हो ही जायगा कि मानिकचन्द ने सेठ कस्तूरचन्द जी से नकद रुपया लेकर अपने लेने वालों को भुगतान कर दिया है।

कस्तूरचन्द : मैंने रसीदें ले ली हैं वकील साहब·····और रुपया भी मैंने इन लोगों को भुगतान कर दिया है। आखिर मानिकचन्द जी मेरे समधी हैं, उनकी बेइज्जती होती है। [तीनों व्यक्तियों की ओर देखता है] है न ऐसा ?

एक व्यक्ति : आप बड़े दिल वाले हैं सेठ जी, सत्तर लाख रुपये की रकम कम नहीं होती। आप न बीच में पड़े होते तो हम लोगों को तो मानिकचन्द ने डुबा ही दिया था।

दूसरा व्यक्ति : जी हाँ सेठ जी, सुना है मदन बाबू सेठ मानिकचन्द का घाटा मानने से इन्कार करते हैं।

कस्तूरचन्द : [मुस्कराता है] हाँ, मदन ही नहीं, मानिकचन्द की पत्नी भी····

तीसरा व्यक्ति : यानी आपकी समधिन।

कस्तूरचन्द : [हँसता है] हा! हा! हा! हाँ, मेरी समधिन ! सुना है उन लोगों ने यह तै कर लिया है कि यह सब सौदे बीमारी की हालत में हुए हैं जब सेठ मानिकचन्द का दिमाग खराब था। वे लोग मुकदमेबाजी

के लिए तैयार हैं।

[मुकदमेबाजी की बात सुन कर वकील की आँखों में चमक आ जाती है]

वकील : आप निश्चिन्त रहिए, इस दस्तावेज से कर्ज लेना साबित हो जाता है, और ऐसी हालत में मानिक-चन्द को इस दस्तावेज की रजिस्ट्री करानी ही पड़ेगी।

[डाक्टर जयलाल का दाहिनी ओर से प्रवेश। डाक्टर जयलाल के आते ही कस्तूरचन्द उठ कर खड़ा हो जाता है।]

कस्तूरचन्द : आइये डाक्टर साहब, बैठिए।

जयलाल : जी, मैं जरा जल्दी में हूँ। कौन बीमार है ?

कस्तूरचन्द : [हँसता हुआ] हम सब बीमार हैं डाक्टर साहब, आप बैठिये न। कुछ परामर्श करना है आपसे।

जयलाल : मेरे पास परामर्श का समय नहीं हैं सेठ जी। आप जानते ही हैं मैं कितना व्यस्त हूँ। इस समय मुझे क्षमा कीजिए, फिर कभी आप परामर्श कर लीजिएगा।

वकील : बैठिए भी डाक्टर साहब, दस-पाँच मिनट में आपका कुछ बिगड़ न जायगा।

जयलाल : जी, लेकिन दस पाँच-मिनट में मेरे किसी मरीज का बहुत कुछ बिगड़ सकता है। [बैठता है] कहिए क्या बात है ? लेकिन जल्दी-से-जल्दी आपको जो

कुछ पूछना है पूछ लीजिए ।

कस्तूरचन्द : जी डाक्टर साहब···जी···वात यह है कि आप मेरे समधी साहव यानी सेठ मानिकचन्द का इलाज कर रहे हैं न !

जयलाल : जी हाँ, और अब उनकी तबीयत पहले से अच्छी है , पन्द्रह दिन में वे बाहर आने-जाने लगेंगे ।

कस्तूरचन्द : यह जानकर वड़ी प्रसन्नता हुई । [तीनों आदमियों की ओर देखता है ।]
हमारे डाक़्टर साहव का जो नाम है वह कुछ ऐसे ही नहीं है । भगवान न करे आप लोगों को कुछ हो जाय, लेकिन अगर कभी कुछ बीमार-वीमार पड़ें तो डाक्टर जयलाल से ही इलाज कराना । [डाक्टर की ओर मुड़ता है]तो डाक्टर साहव, मुझे यह खवर मिली थी कि सेठ मानिकचन्द का दिमाग कुछ खराब हो गया है, तो फिर यह खबर झूठी थी ।

जयलाल : सेठ जी, दिमाग तो हर एक पैसेवाले का खराव हो जाया करता है, अगर आप पैसा पैदा करने की प्रवृत्ति को बीमारी समझ लें । सिवा इसके उनके दिमाग में न कभी कोई खराबी हुई और न कभी कुछ होगी ।

वकील : जी डाक्टर साहब, सुना है बीमारी में कुछ लोगों का दिमाग कमजोर हो जाया करता है ।

जयलाल : बिल्कुल ठीक है, और इस पैसे के मर्ज में तो खास-तौर से । लेकिन पैसे के मर्ज को लोग मर्ज ही कब मानते हैं [कुछ रुक कर] आखिर बात क्या है जो आप लोगों ने मुझे याद किया है ।

कस्तूरचन्द : बात यह है कि डाक्टर साहब, सेठ मानिकचन्द को करीब सत्तर लाख का घाटा हुआ है । मेरी समधिन और मदन का कहना है कि यह घाटा उन्होंने पागलपन की हालत में दिया है ।

जयलाल : तो सेठ कस्तूरचन्द जी, आप भी यही कहिए । उनकी लड़की आपके लड़के से ब्याही है, वह आपके समधी हैं न । उनके घाटे में आपको भी अफसोस होना चाहिए ।

वकील : डाक्टर साहब, अपने समधी की इज्जत बचाने के लिए सेठ कस्तूरचन्द ने घाटा अपने पास से अदा कर दिया है ।

जयलाल : सत्तर लाख रुपया आपने अपने समधी की इज्जत बचाने के लिए दे दिया ? हूँ ··· तो मुझे आपकी परीक्षा करनी होगी सेठ कस्तूरचन्द जी । सहानुभूति और हमदर्दी की मानवीय सीमा होती है । इस सीमा को तोड़ना ही पागलपन का लक्षण है ।

वकील : आप समझे नहीं डाक्टर साहब । सत्तर लाख देकर कस्तूरचन्द ने उनकी कपड़े की मिल अपने नाम लिखा ली है ।

जयलाल : [बड़ी जोर से हँसता है] हा ! हा ! हा ! समझ गया, सब कुछ समझ गया वकील साहब । कोई किसी को नहीं छोड़ता····पैसे की घृणित दुनिया में प्रेम, सहानुभूति, ममता, त्याग, दया आदि का कोई विधान ही नहीं है । नहीं कस्तूरचन्द जी, आपको कोई बीमारी नहीं है, आपने मुझे बेकार बुलाया ।

कस्तूरचन्द : जी, मैंने आपको केवल यह पूछने के लिए बुलाया था कि मानिकचन्द का दिमाग तो नहीं खराब था । [कस्तूरचन्द एक हजार रुपया जयलाल को देता है ।] आपका इतना समय मैंने लिया है, यह आपकी फीस है ।

जयलाल : [खड़ा हो जाता है] क्षमा कीजिएगा · · · मैं न आत्मा की बीमारी का इलाज करता हूँ न उसके इलाज की फीस लेता हूँ । आप विश्वास रखिए, सेठ मानिकचन्द का दिमाग उतना ही सही-सलामत है जितना आपका, इन सब लोगों का । उन्हें किसी तरह का पागलपन नहीं हुआ है और यह बात मैं बिना एक हजार रुपया लिये भी कह सकता हूँ । [चलता है] मुझे कुछ ऐसा लगता है कि दुनिया की नजर में ईमानदारी और सत्य पागलपन है । और इस हिसाब से न आप पागल हैं, न मानिक-चन्द पागल है · · · पागल तो शायद · · · मैं हूँ ।

[पटाक्षेप]

तीसरा अंक

प्रथम दृश्य

[मानिकचन्द की निजी बैठक जो मानिकचन्द के कमरे से मिली हुई है। यह बैठक एक ढके हुए बरामदे के रूप में है। बैठक में एक तख्त पड़ा है जिस पर मोटा गद्दा बिछा है। उस तख्त पर तीन गाव-तकिए रक्खे हैं। तख्त के सामने चार आराम कुर्सियाँ पड़ी हुई हैं। सामने मानिकचन्द के कमरे का दरवाजा है। तख्त की बगल में एक मेज पड़ी हुई है जिस पर टेलीफोन रखा है। नर्स एक आराम कुर्सी पर बैठी हुई अखबार पढ़ रही है और पेंसिल से उस अखबार पर निशान करती जाती है। दाहिनी ओर से रानी प्रवेश करती है। रानी का मुख उतरा हुआ और पीला है, कपड़े अस्तव्यस्त हैं। वह नर्स के पास में आकर रुकती है। नर्स रानी को देख कर खड़ी हो जाती है।]

नर्स : नमस्कार·····सेठानी !

रानी : [मुसकराने का उपक्रम करती हुई] नमस्कार नर्स ! अभी दिन की नर्स नहीं आई ?

नर्स : [घड़ी देखती हुई] जी·····मिस शर्मा के आने का समय हो रहा है, अभी सवा सात बजे हैं, आठ बजे से उनकी ड्यूटी है।

[मदन का बाईं ओर से प्रवेश]

मदन : नमस्कार नर्स ! सेठ जी की कैसी तबीयत है ?

नर्स : आज रात भर सोए नहीं। न जाने क्या आप ही आप कहते रहे। बीच-बीच में उठ कर लिखने लगते थे।

रानी : डाक्टर भी तो शायद इसी समय आते हैं ?

नर्स : जी हाँ श्रीमती जी । पन्द्रह मिन्ट में डाक्टर भी आ जायँगे, मिस शर्मा भी आ जायंगी । [मुसकराती है] मैं स्वयं डाक्टर की प्रतीक्षा कर रही हूँ । रात की रिपोर्ट देनी है उन्हें ।

[मदन एक कुर्सी पर बैठ जाता है । उसका मुँह भी बेहद उतरा हुआ है, आँखों में एक प्रकार का सूनापन है । स्लीपिंग पाजामा और कोट पहने है, बाल बिखरे है ।]

मदन : मैं उनका इन्तजार कर रहा हूँ, तुम कमरे में जाओ ।

नर्स : बहुत अच्छा, श्रीमान् ।

[नर्स अखबार लिये कमरे में चली जाती है । रानी मदन को गौर से देखती है फिर मदन के सामने तख्त पर बैठ जाती है ।]

रानी : लेकिन मैं कहती हूँ कि सत्तर लाख का घाटा वे किस तरह कर बैठे ?

मदन : दिमाग खराब हो गया है उनका, भला सही दिमाग वाला कहीं ऐसा काम कर सकता था ?

रानी : सट्टा जुआ है । मदन, यह रकम हम लोगों से कानूनन तो ली नहीं जा सकती ।

मदन : बिल्कुल ठीक । इतनी बड़ी रकम देने के माने हैं हमारा करीब-करीब दिवाला निकल जाना ।

रानी : लेकिन मदन, तुमने यह सट्टा उन्हें करने क्यों दिया ?

मदन : मैं यहाँ था कहाँ ? कलकत्ता में एक हफ्ता और दिल्ली में एक हफ्ते के काम में लग गये तीन हफ्ते। [कुछ रुक कर रानी की तरफ देखता है] लेकिन माँ, आखिर तुमने भी तो बाबू जी की बीमारी की खबर सुनी थी, तुम्हीं मसूरी से चली आतीं।

रानी : मैं क्या जानती थी कि बीमारी में यह पागलपन कर डालेंगे ?

[जिस समय रानी अपनी बात कहती है, मानिकचन्द अपने कमरे से बाहर निकलता है। उसके पैर लड़खड़ा रहे हैं, उसकी आँखें लाल हैं, उसके मुख पर एक अजीब ढंग की कुरूपता है।]

मानिकचन्द : पागलपन ! हा···हा···हा···थोड़ी सी गलती हो गयी, उसे पागलपन कहते हो···बेवकूफ कहीं के। मैंने पैदा किया, मैंने खोया, मैंने खोया, मैं पैदा करूँगा·····मैं पैदा करूँगा।

[विक्षिप्त की भाँति हँसता है]

मदन : बाबू जी, आपको तो उठना तक मना है, आप कमरे के बाहर क्यों चले आए ? नर्स तुमने इन्हें क्यों चले आने दिया ?

[मानिकचन्द उत्तेजित होकर दाँत किटकिटा कर देखता है।]

मानिकचन्द : इसलिए कि जो घाटा मैंने दिया है, उसे पूरा करना है। तुमने मेरा टेलीफोन क्यों हटवा दिया ? मुझे

सौदा करना है ।

[रानी उठकर मानिकचन्द के पास जाती है]

रानी : फिर वही पागलपन । चलिए, आप लेटिए चलकर ।

[मदन भी उठकर मानिकचन्द के पास जाता है और उसे पकड़ता है ।]

मानिकचन्द : मुझे छोड़ो मदन ! [मानिकचन्द तख्त की ओर बढ़ता है] सत्तर लाख का घाटा····सत्तर लाख का घाटा !

[मानिकचन्द तख्त पर बैठ जाता है ।]

मदन : [कोमल स्वर में] आपने घाटा नहीं दिया है, आप घाटा नहीं देंगे··· लेट जाइए आप !

[मानिकचन्द लेट जाता है, फिर आश्चर्य से मदन को देखता है ।]

मानिकचन्द : मैंने घाटा नहीं दिया है ? मैं घाटा नहीं दूँगा ।

[थोड़ी देर तक सोचता है फिर मुसकरा पड़ता है ।]

ठीक है । मैं बीमार हूँ, मेरा दिमाग खराब हो गया है । बिल्कुल ठीक । [हँसता है]

रानी : चलिए अब अपने कमरे में लेटिए चल कर । आपको आराम की ज़रूरत है ।

मानिकचन्द : आराम ! हाँ, मैं बहुत थक गया हूँ । नर्स, जरा मेरा टॉनिक कमरे से ला दो । बैठो मदन, तुम भी बैठो रानी ।

[नर्स कमरे में जाती है, रानी और मदन तख्त के पास

कुर्सियाँ खीच कर बैठ जाते हैं]

मानिकचन्द : [थकी हुई आवाज में] रानी ! अभी तुमने कहा था बीमारी में मैंने यह पागलपन कर डाला। तुमने ठीक कहा था। लेकिन इस पागलपन का कारण बीमारी के अलावा कुछ दूसरा भी है।

रानी : वह क्या ?

मानिकचन्द : उसे जानकर तुम लोगों के दिलों को एक धक्का-सा लगेगा।

मदन : नहीं बाबू जी ! आप कहिये।

मानिकचन्द : सुनना ही चाहते हो, तो सुनो। तुम जानते ही हो कि मैं एक महीने से अकेला इस कमरे में बन्द हूँ।

रानी : आप बीमार थे। लेकिन अकेले तो नहीं थे आप। दो नर्सें बराबर आपकी सेवा कर रही हैं, डाक्टर दोनों समय आता है। नौकर-चाकर सब मौजूद हैं।

मानिकचन्द : नर्स····नौकर····चाकर। हाँ रानी, ये सब थे, लेकिन ये मेरे कोई नहीं थे, ये सब-के-सब पैसे के थे। किसी को मुझसे कोई सहानुभूति नहीं थी, मेरे प्रति इनमें से हरेक में भावना का अभाव था। ये सब मेरी सेवा, मेरी देखभाल नहीं करते थे, ये लोग पैसे की गुलामी करते थे। [कुछ देर तक रुक कर सोचता है] मैं इन्हें दोष नहीं देता, दुनिया में हरेक आदमी पैसे की गुलामी करता है। उस हरेक में मैं हूँ, तुम हो, मदन है। क्यों मदन, मैं

वीमार था और तुम उस वक्त पैसे की गुलामी करने के लिए कलकत्ता और दिल्ली में थे। क्यों रानी, मैं यहाँ अकेला वीमार था और तुम मसूरी में वैठी हुई पैसे का उपभोग कर रही थीं।

[दाहिनी ओर से शोभा का प्रवेश]

मानिकचन्द : आओ शोभा···· वहुत दिनों वाद आई हो।

शोभा : क्या वतलाऊँ····घर से फुरसत ही नहीं मिलती वावू जी ! माँ के आने की खवर सुनकर कितनी मुश्किल से आ पाई हूँ यह मैं ही जानती हूँ।

रानी : तो तुम यहीं हो, मैं तो समझी तुम स्विटजरलैंड चली गई होगी। गर्मियों में यहीं रहीं।

शोभा : क्या करूँ····लाला जी अकेले थे, उनकी देख-भाल कौन करता।

मानिकचन्द : सुना रानी···यह शोभा···मेरी लड़की कितनी लगन के साथ अपने ससुर की देख-भाल करती है। यह तो यहाँ थी, लेकिन यह भी मेरी वीमारी में नहीं आई; आने की फुरसत ही नहीं मिली। मैंने कस्तूरचन्द से कहा भी था। लेकिन इसके यहाँ पार्टियाँ होती थीं, रोज उत्सव होते थे। वीमार पिता के स्थान पर पैसे के प्रदर्शन का महत्त्व अधिक था।

शोभा : [रोने के स्वर में] मैं इसीलिए आपके पास नहीं आती वावू जी, जव आई तव आपने कड़वी वातें सुनाईं।

मदन : बाबू जी, अब बस कीजिये···बहुत कह चुके ।

मानिकचन्द : यह कठोर और कुरूप सत्य नहीं सुनना चाहते मदन । लेकिन मैं अपनी बात कहूँगा, और वह बात तुम्हें सुननी पड़ेगी । हाँ, तो उस बीमारी की हालत में मैंने अनुभव किया कि ममता, भावना नाम की कोई चीज नहीं है । मैं अकेला इस कमरे में उस पिशाच की भाँति बन्द था जिसके जीवन में हँसी नहीं, रोना नहीं; एक भयानक सूनापन है ।

रानी : अब बस कीजिये ।

मानिकचन्द : बुरा न मानो रानी । मैं न तुम्हें दोष दे रहा हूँ; न मदन को, न शोभा को; मैं तो केवल सत्य की व्याख्या कर रहा हूँ । तो वह सूनापन मेरे प्राणों को बुरी तरह अखर रहा था । और उस समय मैंने पैसे के देवता को याद किया । मैंने टेलीफोन उठाया और मैं उस देवता की उपासना में लग गया ।

रानी : [तीखे स्वर में] लेकिन उपासना का समय हुआ करता है ।

मानिकचन्द : [रानी के तीखे स्वर की उपेक्षा करते हुए] तुम उपासना को समझती नहीं । उपासना का न कोई समय होता है न अवधि होती है । असली उपासना वह है जहाँ सारा जीवन ही उस उपासना के रंग-में-रंग जाय । [कुछ रुककर] और उस उपासना से सुख-दुख मुझे फिर से मिल गए । मैं प्रसन्न होता था,

मैं दुखी होता था। उस मौत के सूनेपन को मैं अपने पास से हटा सका।

मदन : लेकिन यह घाटा ? इसे हम कैसे बर्दाश्त कर सकेंगे ?

मानिकचन्द : हाँ यह घाटा ! [सोचता है] मदन, अभी तुमने कहा था कि मैं बीमार था। पागलपन की हालत में मैंने ये सौदे किये थे।

[मानिकचन्द जिस समय अपनी बात कहता है, डाक्टर जयलाल बाईं ओर से प्रवेश करता है। डाक्टर को कोई आते हुएनहीं देखता···वह दरवाजे के पास रुककर मानिकचन्द की बात सुनता है फिर एकाएक कह उठता है।]

जयलाल : क्षमा कीजिएगा सेठ जी, आपकी तबीयत थोड़ी-बहुत कुछ खराब अवश्य थी, लेकिन आपने पागलपन की हालत में यह सौदे नहीं किये थे।

मानिकचन्द : कौन ? कौन ? डाक्टर साहब ?

जयलाल : जी हाँ, मैं हूँ।

[डाक्टर दरवाजे से चलकर तख्त के पास आता है।]

मदन : [जरा कड़े स्वर में] आपकी राय तो अभी हम लोगों ने नहीं माँगी थी।

जयलाल : आपने नहीं माँगी है, लेकिन दूसरे लोगों ने जरूर माँगी है। बाजार में यह खबर फैल गई है कि सेठ मानिकचन्द घाटे की रकम देने से इन्कार कर रहे हैं।

रानी : सट्टे में घाटा नहीं होता, वहाँ जुए की हार-जीत होती है ।

मदन : और जुए की हार-जीत कानूनन वसूल नहीं की जा सकती ।

जयलाल : कानूनन ! मदन बाबू····सेठ जी ने अपनी एक मिल पर सत्तर लाख रुपए कर्ज लेकर घाटा पूरा किया है ।

[मदन और रानी इस तरह चौंकते हैं जैसे बिच्छू ने डंक मार दिया हो, और उठकर खड़े हो जाते हैं । शोभा उसी तरह शान्त भाव से बैठी रहती है, केवल उसके मुख पर एक हल्की-सी मुसकराहट आ जाती है ।]

मदन : बाबू जी, क्या यह सच है ?

[मानिकचन्द के मुख पर उलझन के भाव हैं और वह चुप रहता है ।]

रानी : आप बोलते क्यों नहीं ?

मानिकचन्द : डाक्टर, क्या वह दस्तावेज रेहननामा था जिस पर सेठ कस्तूरचन्द ने मेरे दस्तखत लिये थे ?

जयलाल : मुझे क्या पता ? आपने वह कागज देख तो लिया था ।

मानिकचन्द : उसमें घाटे की और मिल की बात तो कुछ थी···· कस्तूरचन्द जी ने बेइज्जती की बात चलाकर मुझे इतना घबरा दिया था कि मैंने ठीक तौर से वह कागज भी नहीं पढ़ा ।

रानी : [शोभा को जलती आँखों से देखती है] अच्छा, तो तुम अपने माँ-बाप को भी लूट सकती हो।

शोभा : माँ, ससुर जी ने तो बाबू जी की इज्जत बचाई, इसमें लूटने का क्या सवाल है ? आखिर उन्होंने सत्तर लाख रुपया अपने पास से दिया है।

मदन : ओह····इतना नीचे गिर सकती हो····इतना नीचे गिर सकती हो। और इस घर में आते हुए तुम्हें शर्म नहीं आई।

शोभा : [बिगड़कर] मुझे आप लोग इस सब में न घसीटिए। [शोभा की आँखों में आँसू आ जाते हैं और सिसकने लगती है] तुम्हारे पास इज्जत नहीं है, ईमान नहीं है, लेकिन ससुरजी में तो यह सब है···उन्होंने तुम लोगों की इज्जत बचाने को यह सब किया।

मदन : बड़े इज्जत बचाने वाले आये। मिल पर कब्जा करके बैठ गए हैं, मैं सोच रहा था कि मामला क्या है। पूछा तो किसी बात का सीधा जवाब ही नहीं। धोखेबाज, दगाबाज···जाओ शोभा···· यहाँ से जाओ।

शोभा : मैं कसम खाती हूँ कि अब इस घर में पैर न रखूँगी।

[शोभा रोती हुई जाती है।]

मदन : बाबू जी का दिमाग ठीक नहीं था डाक्टर साहब ! आप तो इलाज कर रहे थे····आप यह जानते हैं।

आपको इनके इलाज में वड़ा परिश्रम हुआ, आपकी इस कृपा के लिए मैं आपको दस हजार रुपये भेंट देता हूँ ।

जयलाल : दस हजार मदन बाबू ! दस हजार रुपये की रकम बहुत बड़ी होती है, उससे लोगों की जिन्दगी वन-बिगड़ सकती है । दस हजार रुपये की रकम बहुत छोटी होती है ; वह कलाकेन्द्र के उद्घाटन में महज दान के तौर पर दी जा सकती है । मुझे मेरी फीस बराबर मिलती रही है, धन्यवाद !

मानिकचन्द : मदन, डाक्टर साहव ने वड़ा परिश्रम किया है । मैं सोचता था कि इन्हें एक बड़ा, अच्छा-सा अस्पताल खुलवा दूँ । एक अस्पताल में पचास-साठ हजार रुपये से कम न लगेगा, वहुत सम्भव है सत्तर-अस्सी हजार लग जायं ।

डाक्टर : सत्तर लाख के घाटे का, एक प्रतिशत धर्मखाते में या व्यक्ति को खरीदने में ? [रूखी हँसी हँसता है] आप यह रुपया पूर्ण रूप से स्वस्थ होकर दान कर दीजिएगा । आपकी वीमारी अभी दूर नहीं हुई है ।

रानी : यह दान नहीं है डाक्टर साहव, यह आपकी सेवाओं का पुरस्कार है । फिर दान-पुण्य भी वीमारी की हालत में किया जाता है ।

जयलाल : पुरस्कार, उपहार, दान ! वड़े सुन्दर शब्द हैं श्रीमती जी ! लेकिन अभी जल्दी क्या है । [मानिक-

चन्द से] सेठजी, आप यहाँ क्यों आ गए ? आपको कमरे में ही रहना चाहिए। नर्स !

नर्स : डाक्टर !

जयलाल : जरा सहारा दो···उठिये सेठ जी !

[डाक्टर और नर्स मानिकचन्द को सहारा देकर उठाते हैं।]

मदन : हम लोग चलते हैं डाक्टर। यहाँ से जाने के पहले मुझसे मिल लीजिएगा। मैं अपने ड्राइंगरूम में हूँ।

डाक्टर : जरूर, जरूर !

[मदन और रानी दाहिनी ओर जाते हैं। डाक्टर और नर्स मानिकचन्द को सहारा देकर सामने की ओर बढ़ते हैं।]

(पटाक्षेप)

दूसरा दृश्य

[मानिकचन्द का शयन-गृह । कमरा ठीक उसी प्रकार है जैसा पहले अंक के पहले दृश्य में है । मानिकचन्द आँखें बन्द किये तकिये के सहारे लेटे हैं, डाक्टर जयलाल उनकी परीक्षा कर रहे हैं । जयलाल परीक्षा समाप्त करके चार्ट पर कुछ लिखता है । नर्स डाक्टर के हाथ से चार्ट लेकर बाहर जाती है । नर्स के जाते ही किशोरीलाल का प्रवेश । किशोरीलाल के बाल अब सफेद हो गए हैं, मुख पर झुरियाँ पड़ने लगी हैं । धोती-कुरता पहने हैं, नंगे सिर, पैरों में चप्पल हैं । किशोरीलाल आकर मानिकचन्द के पलंग के पास दूसरी ओर खड़ा हो जाता है । मानिकचन्द आहट पाकर आँखें खोलता है ।]

[और जयलाल से कहता है]

मानिकचन्द : कितने दिन और लगेंगे डाक्टर, यह बीमारी तो बहुत लम्बी हो गई ।

जयलाल : हाँ लम्बी हो गई है । सुधार की गति बड़ी धीमी है, सेठ जी !

मानिकचन्द : लेकिन सुधार तो है !

जयलाल : आप और हम इसे सुधार कह सकते हैं, लेकिन यह केवल उतार-चढ़ाव है ।

मानिकचन्द : उतार-चढ़ाव कैसा ?

जयलाल : सेठ जी बीमारी का अन्त होता है, बीमारी में सुधार नहीं हुआ करता । जितने दिन तक बीमारी चलती है वह बीमारी की अवधि कहलाती है । उस

अवधि में उतार-चढ़ाव होते रहते हैं, अगर सुधार हो तब तो बीमारी अच्छी ही हो गई ।

[मानिकचन्द के मुख पर भय-मिश्रित चिन्ता के भाव आ जाते हैं ।]

मानिकचन्द : मैं अच्छा तो हो जाऊँगा डाक्टर—बोलो !

जयलाल : [रूखी हँसी हँसता है] अरे, आप डर गए ? आप भी डर सकते हैं, इसकी मैंने कल्पना ही नहीं की । नहीं, डरने की कोई बात नहीं, आप करीब-करीब अच्छे हो चुके हैं । एक हफ्ते में आप अपने दफ्तर जाने लगेंगे ।

मानिकचन्द : सच डाक्टर ! बहुत-बहुत धन्यवाद ! आपकी बड़ी कृपा है ।

जयलाल : इलाज करना मेरा पेशा है सेठ जी, जिसकी मैं फीस लेता हूँ । इसमें कृपा की कोई बात नहीं ।

मानिकचन्द : हाँ, हाँ, लेकिन आप मदन से ड्राइंग रूम में जरूर मिल लीजिएगा । अस्पताल का वह प्रबन्ध कर देगा । जितना पैसा लगेगा वह लगा देगा ।

जयलाल : सेठ जी, क्या आप जानते हैं कि दुनिया में पैसे से बड़ी कोई ताकत नहीं ?

मानिकचन्द : मैं नहीं समझता, यह दुनिया का एकमात्र सत्य है।

जयलाल : और आप समझते हैं कि पैसे से सब कुछ खरीदा जा सकता है, धर्म, ईमान, इज्जत, आबरू ।

मानिकचन्द : [थके स्वर में] इस समय मुझसे यह प्रश्न क्यों ?

तुम जानते हो डाक्टर कि मैं बीमार हूँ ।

जयलाल : (उत्तेजित होकर) हाँ, आप बीमार हैं और आप जिन्दगी भर बीमार रहेंगे । इस बीमारी से मैं आप को अच्छा नहीं कर सकता । मैं क्या, कोई भी आपको अच्छा नहीं कर सकता ।

मानिकचन्द : डाक्टर, यह तुम्हें क्या हो गया ?

जयलाल : कुछ नहीं सेठ जी । [किशोरीलाल की ओर संकेत करता है] आप इनको पहचानते हैं ?

[मानिकचन्द किशोरीलाल की ओर अपना मुख घुमाता है ।]

मानिकचन्द : तुम कौन ? यहाँ कैसे चले आये ? डाक्टर यह कौन हैं ?

किशोरीलाल : तुम मुझे भूल गए, लेकिन मैं तुम्हें नहीं भूला हूँ, याद करो बाबू मानिकचन्द ।

मानिकचन्द : तुम, तुम····किशोरीलाल····नहीं, असम्भव ।

किशोरीलाल : तुम्हारी याददाश्त कमजोर नहीं है बाबू मानिकचन्द ···नहीं, सेठ मानिकचन्द । मैं किशोरीलाल हूँ ।

मानिकचन्द : तुम क्यों आए हो, किशोरीलाल ? मैंने तिजोरी से रुपया नहीं निकाला था । तुम्हारे पास कोई सबूत नहीं है ।

किशोरीलाल : डरो मत मानिकचन्द । तुमने जो चोरी की थी उसकी सजा मैं भुगत चुका हूँ । तुम्हारे पाप का प्रायश्चित्त मैं कर चुका हूँ ।

मानिकचन्द : किशोरीलाल !

किशोरीलाल : तीन साल जेल में रहा हूँ, तीन साल ! तुम नहीं समझ सकते मानिकचन्द । घर में मेरी पत्नी थी, मेरी दो लड़कियाँ थीं, और [जयलाल की ओर इशारा करते हुए] मेरा यह लड़का था । यह जयलाल, इसे तुम देख रहे हो, यह डाक्टरी पढ़ रहा था ।

मानिकचन्द : [घवराए स्वर में] डाक्टर····तुम····किशोरीलाल के लड़के हो ।

किशोरीलाल : मेरी पत्नी ने अपने जेवर वेचे, मेरी लड़की ने चक्की चलाई, पड़ोस के कपड़े सिये । इस प्रकार उन लोगों ने जीवन-निर्वाह किया····इस प्रकार इस जयलाल ने पढ़ाई पूरी की ।

मानिकचन्द : मुझे दुःख है ।

किशोरीलाल : मैं जेल में वन्द था । कभी रोता था, कभी हँसता था, कभी पागलपन में बकने लगता था । तीन साल वाद छूट कर मैं अपने घर पहुँचा, और मैंने देखा कि मैं वुरी तरह उजड़ गया हूँ । लोग मुझसे वात नहीं करते थे । मुझ पर तिरस्कार और उपेक्षा की वर्षा होती थी । मेरे फूल-से वच्चे कुम्हला गये थे । मेरी पत्नी इन तीन वर्षों में बूढ़ी हो गयी थी । घर में भयानक अभाव था ।

मानिकचन्द : वस करो किशोरीलाल····बोलो, तुम क्या

चाहते हो ?

किशोरीलाल : [एक करुण मुसकराहट उसके चेहरे पर आती है] कुछ नहीं, सिर्फ तुम्हें अपनी कहानी सुनानी है। हाँ, तो मैं कह रहा था कि घर लौट कर मैंने जो कुछ देखा उससे मैं कांप उठा। उस समय तक यह जयलाल डाक्टरी पास कर चुका था। लेकिन इसकी डाक्टरी नहीं चली। एक सजायाफ्ता आदमी का लड़का था न यह ! बाप-दादों का पुराना मकान कर्ज से लद चुका था। उसे बेच कर मैं वहाँ से भाग खड़ा हुआ, और इस नगर की शरण ली।

मानिकचन्द : लेकिन उस समय तुम मुझ से क्यों नहीं मिले ?

किशोरीलाल : इसलिए कि मुझे तुम्हारा पता नहीं मालूम था। फिर मुझे इस बात का पूरा विश्वास नहीं था कि वे रुपये तुमने ही चुराए थे।

[किशोरीलाल के मुख पर मानिकचन्द के लिए वितृष्णा और घृणा का भाव स्पष्ट हो जाता है।]

मानिकचन्द : किशोरीलाल, तुम मुझसे रुपये वापस ले लो, लेकिन मुझे इस तरह मत देखो।

किशोरीलाल : मानिकचन्द, जो कुछ मैंने सहन किया उसका कोई मुआवजा नहीं। मैं तुमसे रुपये लेने नहीं आया हूँ, मैं सिर्फ तुम्हें एक बार देखने आया हूँ। मैं तुम्हारा वैभव देखना चाहता था, लोग कहते हैं तुम करोड़पति हो, लोग कहते हैं तुम ऐश-अ

की जिन्दगी व्यतीत करते हो ।

[मदन और रानी का तेजी के साथ प्रवेश । मदन के हाथ में एक कागज है । वह द्वार से ही कहता हुआ आता है]

मदन : बाबू जी, इन्कमटैक्स वालों ने चालीस लाख रुपए का नोटिस दिया है ।

मानिकचन्द : [चौंक कर] चालीस लाख !

मदन : न जाने कैसे उन्हें हमारे पुराने हिसाब-किताब का पता चल गया ।

रानी : अजीब मुसीबत आ पड़ी है···इन रुपयों का भी प्रबन्ध करना है ।

मदन : हाँ, बिना रुपयों का प्रबन्ध किये कैसे काम चलेगा ! बाबू जी, आपके पास कुल कितना रुपया होगा ?

मानिकचन्द : मेरे पास कितना रुपया होगा ? क्यों ? मेरे रुपए से तुम्हें क्या मतलब ?

रानी : आप सेफ की चाबी मदन को दे दीजिए, कुछ प्रबन्ध तो करना ही होगा । मिल छुड़ाना है ।

[मानिकचन्द रानी और मदन को बारी-बारी से कई बार देखता है । उसके मुख पर एक कुरूप मुसकराहट आती है]

मानिकचन्द : तो इतनी देर तक यही सलाह करते रहे हो तुम माँ-बेटे । [मुसकराहट लोप हो जाती है, और उसका स्वर उत्तेजित हो जाता है ।]

सेफ की चाबियाँ मदन को दे दूँ और अपने हाथ कटा लूँ । जाओ यहाँ से, मैं सेफ की चाबी किसी

को नहीं दूँगा ।

रानी : आखिर आपके मरने के बाद मदन ही तो इस सम्पत्ति का मालिक होगा ।

मानिकचन्द : मेरे मरने के बाद ही, उसके पहले नहीं । और मेरे मरने के लिए तुम दोनों माला फेरो, पूजा-पाठ कराओ ··· यहाँ से ··· जाओ तुम दोनों । [उत्तेजित होकर काँपने लगता है ।]

जयलाल : आप लोग अभी यहाँ से जाइये । जब शान्त हो जायँ तब समझा-बुझाकर सब तै कर लीजिएगा ।

मदन : अच्छी बात है···चलो माँ । [किशोरीलाल को देखकर ठिठक जाता है ।] तुम कौन ?

किशोरीलाल : मानिकचन्द का बहुत पुराना मुलाकाती । सुना बीमार हैं तो देखने चला आया ।

[मदन और रानी दोनों चुपचाप चले जाते हैं ।]

मानिकचन्द : [कुछ चुप रहकर किशोरीलाल की ओर घूमता है] देख रहे हो किशोरीलाल !

किशोरीलाल : [दुखित और सहानुभूति के स्वर में] देख रहा हूँ मानिक-चन्द, और मुझे दुःख है । आखिर तुम सेफ की चाबी इन्हें क्यों नहीं दे देते ?

मानिकचन्द : किशोरीलाल, तीन साल जेल में रह कर भी तुम यह न जान पाए कि सेफ की चाबी जिन्दगी की चाबी है । उसे अपने पास से अलग कर देने के माने हैं विनाश । देख रहे हो मेरे गले में सोने की

जंजीर में बंधी हुई यह चाबी ?

किशोरीलाल : [ग्लानि के स्वर में] देख रहा हूँ, मानिकचन्द, वह देख रहा हूँ जिसकी मैंने कल्पना न की थी। अब मैं चलूँगा।

मानिकचन्द : नहीं किशोरीलाल, तुम अपना रुपया वापस ले लो और अपने अभिशाप से मुझे मुक्त कर दो; तब जाओ।

किशोरीलाल : किस-किस के अभिशाप से मुक्त होते फिरोगे मानिकचन्द ? तुम अभिशाप को गलत समझ रहे हो। तुम्हारे ऊपर मेरा अभिशाप नहीं हैं, अभिशाप रुपये का है।

मानिकचन्द : किशोरीलाल, मुझे क्षमा करो !

किशोरीलाल : तुमने मेरा कोई अपराध नहीं किया मानिकचन्द, तुम मुझसे क्षमा बेकार मांग रहे हो। कोई बहुत बड़ा पाप किया होगा मैंने कभी, उसी का दंड मुझे मिला। वह दंड मैंने भुगत लिया है और आज मेरे मन में कोई ग्लानि नहीं, कोई सन्ताप नहीं। मेरे लड़के की डाक्टरी अच्छी चलती है और वह ईमानदार तथा कर्तव्य-परायण आदमी है। मेरे पास कोई अभाव नहीं। मेरे जीवन में मेरी पत्नी की, मेरे पुत्र की, मेरे पौत्रों की ममता है, मेरा सुख-दुख उनका सुख-दुख है। यह क्या कम है ? मैं भगवत् भजन करता हूँ, मैं तुमसे कहीं अधिक सुखी हूँ।

मानिकचन्द : [अनायास उठ कर बैठ जाता है और उत्तेजित होकर कहता है] तुम झूठ बोल रहे हो किशोरीलाल, तुम मुझे धोखा दे रहे हो।

किशोरीलाल : [कठोर स्वर में] मानिकचन्द, धोखा मैं तुम्हें नहीं दे रहा हूँ, धोखा तुम अपने को दे रहे हो। तुम्हारी सुख-शान्ति अर्थ के पिशाच ने तुमसे छीन ली, तुम्हारा सन्तोष उसने नष्ट कर दिया। उस दिन जब तुम दस हजार रुपया चुरा कर लाये थे, तब तुमने समझा था कि तुम रुपया खा गए ..... लेकिन तुमने बहुत गलत समझा था ?

मानिकचन्द : मैंने गलत समझा था ?

किशोरीलाल : हाँ तुमने गलत समझा था। मैं कहता हूँ कि तुमने रुपया नहीं खाया था, रुपया तुम्हें खा गया।

[मानिकचन्द स्तब्ध-सा मौन किशोरीलाल की ओर देखता है, फिर करुण स्वर में कहता है]

मानिकचन्द : क्या कहा किशोरीलाल....रुपया मुझे खा गया ?

किशोरीलाल : हाँ मानिकचन्द, रुपया तुम्हें खा गया। तुम अपने जीवन को देखो ! तुममें ममता नहीं, दया नहीं, प्रेम नहीं, भावना नहीं। तुम्हारे अन्दर वाला मानव मर चुका है। आज तुम्हारे अन्दर अर्थ का पिशाच घुस गया है।

[किशोरीलाल मुंह फेर कर चल देता है, मानिकचन्द पुकारता है।]

मानिकचन्द : किशोरीलाल ! किशोरीलाल !

[किशोरीलाल जैसे मानिकचन्द की आवाज सुनता ही नहीं, वह चला जाता है ।]

मानिकचन्द : गया डाक्टर, गया ।···[तकिये के सहारे लेट जाता है] सुना कितनी कठोर बात कह गया ।

जयलाल : शायद वह बड़ा सत्य कह गए, जिससे आप मर्माहत हो उठे हैं । अब आप चुपचाप लेट जाइए ।

[नर्स और रानी का प्रवेश]

नर्स : डाक्टर ! छोटे सेठ ने कहा है कि उन्हें आफिस जाने में देर हो रही है, आप उनसे मिल लीजिये ।

रानी : हाँ डाक्टर साहब, मैं इनके पास हूँ, आप मदन से मिल लीजिये ।

[मानिकचन्द विक्षिप्त की भाँति उठकर बैठ जाता है]

मानिकचन्द : सेफ की चाबी लेने आई हो । [बड़ी जोर से हँसता है] हा···हा···हा ! नहीं मिलेगी, सेफ की चाबी नहीं मिलेगी जब तक मैं जिन्दा हूँ । जानती हो इस दुनिया में मेरा कोई नहीं है । बीवी, बच्चे, नातेदार, पड़ोसी, नौकर···ये सब-के-सब मेरे नहीं है, मेरे रुपये के हैं । अभी किशोरीलाल मुझे बतला गया है कि मैं मर चुका हूँ । वह मुझसे कह गया है कि रुपया तुम्हें खा गया ।

रानी : [घबराकर] डाक्टर, इनकी तबीयत तो ठीक है ?

मानिकचन्द : बिल्कुल ठीक है रानी, केवल एक सत्य मुझ पर

प्रकट हुआ है। मेरी प्रेतात्मा को किशोरीलाल न जाने कहाँ से पकड़ लाया और वह उस प्रेतात्मा को मेरे सिरहाने छोड़ गया। सुन रही हो वह प्रेतात्मा क्या कह रही है ?···वह कह रही है··· रुपया तुम्हें खा गया। रुपया तुम्हें खा गया··· रुपया तुम्हें खा गया।

[मानिकचन्द जोर-जोर से चिल्लाता है, सब लोग स्तब्ध से उसकी ओर देखते हैं और परदा गिरता है]

●

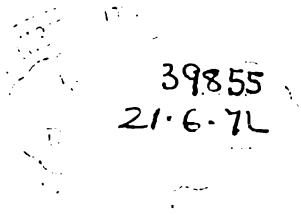

39855
21·6·72

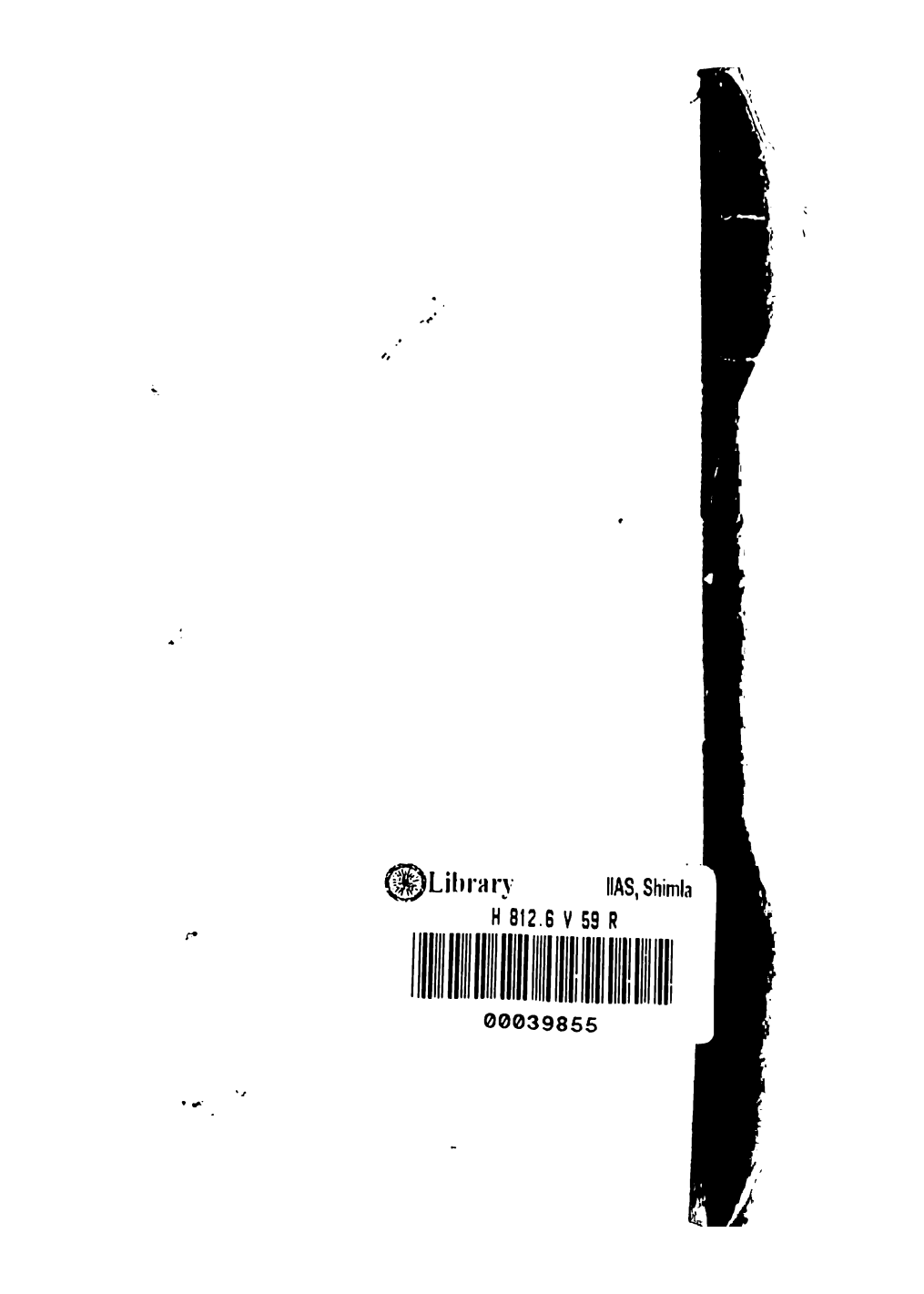
Library IIAS, Shimla
H 812.6 V 59 R
00039855